चारा पत्रिका

वर्ष 11 ISSN-0973-7979 मई-अगस्त, 2009 अंक

संरक्षक
डॉ. के. ए. सिंह
निदेशक

संपादक मंडल
आर.बी. भास्कर
वरि. वैज्ञानिक एवं प्रभारी, राजभाषा
आर. के. भट्ट
प्रधान वैज्ञानिक
सुनील कुमार
वरि.वैज्ञानिक
सुल्तान सिंह
वरि.वैज्ञानिक
प्रभाकांत पाठक
वरि.वैज्ञानिक
ए.के. दीक्षित
वरि.वैज्ञानिक
प्रदीप कुमार त्यागी
तकनीकी अधिकारी टी-6

संपादक
केशव देव
सहायक निदेशक (राजभाषा)

सहयोगी
श्रीआंशकुमार द्विवेदी
निजी सचिव
अशोक कुमार सिंह
फोटोग्राफर

प्रकाशक
निदेशक
भारतीय चरागाह एवं
चारा अनुसंधान संस्थान,झांसी

संपर्क सूत्र
राजभाषा अनुभाग
भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
ग्वालियर मार्ग, झांसी 284 003 उ.प्र.

मुद्रक
एक्सपीडाइट कम्प्यूटर सिस्टम, नई दिल्ली 8 द्वारा लेजर टाईपसेट तथा रॉयल आफसैट प्रिंटर्स, ए-89/1, नारायणा इण्डस्ट्रियल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली 8 से मुद्रित

विषय सूची

निदेशक की कलम से 2

सितम्बर - दिसम्बर माह में में किसान भाइयों के लिए सामयिक कृषि क्रियाएं 3

गिनी उगाएं - एक बार जरूर आजमाएं 9
- शेषमणि मिश्र एवं हरीश पाण्डेय

कंकड़ीली -पथरीली भूमि के लिए उपयुक्त धबलू घास 11
- एस.एन.राम

शुष्क कृषि क्षेत्रों में चारा फसलों की सस्य क्रियाएं एवं उत्पादन तकनीक 12
- राजीव अग्रवाल, जे.बी.सिंह एवं एस.बी. त्रिपाठी

अंजन घास (सेनक्रस सिलिएरिस) का वैज्ञानिक विधि से चारा व बीज उत्पादन 15
- दिवाकर बहुखंडी, आर.के.भट्ट एवं राजकपूर सिंह

खरीफ चारे को कहीं कीट न चट कर जाएं 17
- एन.के.शाह एवं प्रदीप कुमार त्यागी

पौधों की जड़ों से संलग्न लाभप्रद मूलकवक - वेम 19
- एन. हसन, आर.बी.भास्कर एवं पी.के.त्यागी

भदावरी भैंस - घी का भंडार 22
- बद्री प्रसाद कुशवाहा

भेड़-बकरियों में खनिज लवणों की महत्वता 24
- सनत कुमार महन्ता,श्वेता सिंह और शिखा अग्रवाल

अधिक दूध पाने के लिए पशुओं को संतुलित आहार खिलाएं 27
- महावीर सिंह

गोपालन एवं चारा उत्पादन पर आधारित ग्राम विकास 29
- हरनारायण यादव

शहतूत : एक गुणकारी व लाभकारी फल वृक्ष 32
- सुधीर कुमार

भारतवर्ष में पशुधन एवं चारे का परिदृश्य 33
- सुनील कुमार, सुरेन्द्र कुमार गुप्ता एवं अरूण कुमार शुक्ला

संस्थान की प्रचार-प्रसार गतिविधियां 34

पाठकों/किसानों के विचार 35

नोट- पत्रिका में दी गई तकनीकी जानकारी, ऑकड़े एवं विचारों के लिए संपादक मंडल/संपादक उत्तरदायी नहीं है। इस हेतु लेखक से सीधे संपर्क करें।

निदेशक की कलम से

भारत एक कृषि प्रधान देश है इसकी 65 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। देश में मानव जनसंख्या के साथ-साथ पशुधन की संख्या में भी लगातार वृद्धि हो रही है। इस लगातार बढ़ती पशुधन की संख्या और बढ़ते शहरीकरण, औद्योगीकरण एवं अन्य विकास के कार्यों से खेती के लिए उपलब्ध भूमि सिकुड़ती जा रही है, फिर भी आज हमारे पशुधन देश की लगभग 52 प्रतिशत जनसंख्या को रोजगार दिए हुए हैं। इनमें 45 प्रतिशत पशुधन तो ऐसे किसानों के पास हैं जिनके पास एक हेक्टेयर से भी कम भूमि है।

यदि हम सभी तथ्यों पर गौर करें तो एक ही सच्चाई सामने आती है कि हमारा पशुधन कृषि का मुख्य स्तम्भ है और आज भी वह कृषि की रीढ़ है। इनके स्वास्थ्य को हम नज़रअंदाज नहीं कर सकते हैं और इनको स्वस्थ रखने का मतलब, इन्हें भरपेट उत्तम व पौष्टिक आहार उपलब्ध कराना है। इसके लिए उन्हें पर्याप्त मात्रा में हरा व सूखा चारा देना आवश्यक है। पशुधन व्यवसाय में लगभग 70 प्रतिशत व्यय पशुपोषण पर होता है। यदि इन्हें हरा व सूखा चारा उपलब्ध करा दिया जाए तो न केवल उक्त होने वाले व्यय में कमी आएगी बल्कि पशु उत्पाद एवं गुणवत्ता दोनों में वृद्धि देखने को मिलेगी। साथ ही हमारे पशुधन स्वस्थ व हस्ट-पुस्ट रहकर किसानों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ कर सकेंगे। किन्तु हमारे देश के उत्तरी क्षेत्र में मई-जून माह में अक्सर हरे चारे का अभाव देखने को मिलता है।

इस समस्या से उबरने के लिए संस्थान के वैज्ञानिकगण निरंतर नई-नई खोज में जुटे हुए हैं ताकि हमारे पशुओं को भरपेट उत्तम चारा व आहार प्राप्त हो सके, और उनकी इस खोज को किसानों व जनसामान्य तक देश की राजभाषा हिंदी के माध्यम से पहुंचाने में संस्थान के राजभाषा अनुभाग से नियमित चारा पत्रिका प्रकाशित की जा रही है। इसमें हम समय-समय पर किसानों व जनसामान्य उपयोगी जानकारी उपलब्ध कराते आ रहे हैं। इसके लिए हमें किसानों, प्रसार कार्यकर्ताओं एवं संबंधित जनों से बराबर प्रतिक्रियाएं/सुझाव प्राप्त हो रहे हैं जिससे हमें पत्रिका को और अधिक उपयोगी बनाने में बल मिल रहा है। प्रस्तुत अंक में भी चारे की विभिन्न फसलों/पशुओं एवं जनसामान्य उपयोगी जानकारी देने का प्रयास किया गया है। यह अंक निश्चित ही आपको उपयोगी साबित होगा, मुझे ऐसी आशा है। मैं इसके लेखकगणों व संपादक मंडल को धन्यवाद देता हूँ। यह अंक आपको कैसा लगा ? के बारे में अपनी प्रतिक्रियाएं/सुझाव अवश्य भेजें। यदि आप भी चारे व पशुओं से संबंधित जानकारी प्रकाशनार्थ भेजना चाहते हैं तो वह सादर आमंत्रित है।

(कुमार अमरेन्द्र सिंह)
निदेशक

सितम्बर –दिसम्बर माह में किसान भाइयों के लिए सामयिक कृषि क्रियाएं

सितम्बर

तोरिया

- तोरिया की बुवाई के लिए सितम्बर का दूसरा पखवाड़ा उत्तम है। अत: प्रथम पखवाड़े में खेत तैयार कर उसके बाद बुवाई करें। बुवाई के लिए 4–5 किग्रा. उपचारित (3.5 ग्रा./किग्रा.) बीज प्रति हेक्टेयर 30 सेमी की दूरी पर कतार में करें। कूड़ों की गहराई 3–4 सेमी से अधिक नहीं होनी चाहिए।
- तोरिया के लिये सिंचित दशाओं में 50 किग्रा. नत्रजन, 50 किग्रा. फास्फोरस एवं 50 किग्रा. पोटाश का प्रयोग कूड़ों के बगल में पट्टी के रूप में या छिड़काव द्वारा करें। जबकि असिंचित क्षेत्रों में उर्वरक की दर 50 किग्रा. नत्रजन, 30 किग्रा. फास्फेट एवं 30 पोटाश किग्रा. प्रति हेक्टेयर रखें। फास्फोरस के लिये विशेषकर सिंगल सुपर फास्फेट का प्रयोग करें। उक्त उर्वरक उपलब्ध न होने पर 30 किग्रा. गंधक प्रति हेक्टेयर का भी प्रयोग करें।

धान

- धान में बालियां फूटने एवं फूल निकलते समय पर्याप्त नमी बनाए रखने के लिए आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें।
- धान में दूसरी/अन्तिम टॉप ड्रेसिंग बाली बनने की प्रारम्भिक अवस्था (रोपाई के 50–55 दिन) पर करें। टॉप ड्रेसिंग की दर अधिक उपज वाली प्रजातियों में 30 किग्रा. एवं सुगंधित प्रजातियों में 15 किग्रा./हेक्टेयर रखें।

मक्का

- दाने वाली मक्का में बारिश होने की दशा में जल निकास की व्यवस्था करें। लेकिन यदि भूमि में नमी की कमी हो तो आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। क्योंकि फसल में नर मंजरी निकलने की अवस्था एवं दाने की दूधियावस्था में जल की समुचित उपलब्धता अत्यन्त महत्वपूर्ण है।
- जुलाई के द्वितीय पखवाड़े या अगस्त के प्रथम सप्ताह में चारे के लिये बोयी गयी मक्का की कटाई फसल के 45–50 दिन की अवस्था पर करें एवं कटाई के पश्चात् सिंचाई करें। साथ ही 30–40 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

ज्वार

- दाने वाली ज्वार से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिये भूमि में जल की कमी होने पर बाली निकलते या दाना भरते समय सिंचाई करें।
- जुलाई के द्वितीय पखवाड़े या अगस्त के प्रथम सप्ताह में चारे के लिये बोयी गयी ज्वार की कटाई फसल के 45–50 दिन की अवस्था पर करें
- बहुकटाई वाली ज्वार की भी कटाई करें एवं कटाई के पश्चात् सिंचाई करें। साथ ही 30–40 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

बाजरा

- बाजरा की उन्नत/संकर प्रजातियों में नत्रजन की शेष आधी मात्रा (40–50 किग्रा.) बुवाई के 25–30 दिन बाद करें। दो कटाई वाली बाजरा में भी 40–50 किग्रा. नत्रजन का छिड़काव पहली कटाई के पश्चात् करें।
- बहु कटाई वाली बाजरा की भी कटाई करें एवं कटाई के पश्चात् सिंचाई करें साथ ही 30–40 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

लोबिया

- लोबिया की कटाई फसल के 45–50 दिन की अवस्था पर करें एवं कटाई के पश्चात् सिंचाई करें साथ ही 30–40 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

दलहनी एवं सोयाबीन

- लम्बे समय तक बारिष न होने पर उर्द, मूंग एवं सोयाबीन में फलियां बनते समय पर्याप्त नमी बनाये रखने के लिऐ हल्की सिंचाई करें।

मूंगफली

- मूंगफली में खूटियां बनाते समय एवं फली भरने की अवस्था में पर्याप्त नमी बनाये रखने के लिये आवश्यकतानुसार सिंचाई अवश्य करें तथा अधिक वर्षा होने पर उचित जल निकास की व्यवस्था करें।
- मूंग एवं तिली आदि की कटाई करें।

बहुवर्षीय घास

- बहुवर्षीय घासों में कटाई के पश्चात् 30–40 किग्रा. नत्रजन/हेक्टेयर का छिड़काव करें।
- पशुधन की आवश्यकता के लिये रोपी गई बहुवर्षीय गिनी, नेपियर, सिटेरिया की कटाई करें, यथा आवश्यकता उर्वरक, गोबर की सड़ी खाद अथवा कम्पोस्ट खाद डालते रहें।
- यद्यपि वर्षा के जल की पर्याप्त उपलब्धता बनी रहती है फिर भी इन घासों को स्वयं के ज्ञान के आधार पर अंतराल निर्धारित कर यथा आवश्यकता पानी लगाएं और बराबर कटाई करते रहें।
- पैरा, सिटेरिया, कल्लर, मछौरी जैसी बहुवर्षीय घासों को मार्च अप्रैल में जिन किसान भाइयों ने स्थापना की है वहां, वर्षा

के जल का भराव निश्चित है अत: घासों की भरे हुये जल के ऊपर से ही कटाई करें।

- घासों को पूर्णरूप से न डूबने दें अन्यथा जलभराव से चारा घासें मर सकती हैं।

बागवानी

कलमी पौधे

- वर्षा ऋतु में रोपित फलों के कलमी पौधों की मूलवृत्त तथा संकुर शाखा से निकलने वाले अवांछनीय शाखाओं को काटें।
- थालों में नमी की कमी हो तो जीवनयापन हेतु हल्की सिंचाई करें तत्पश्चात् थालों की गुड़ाई करें।

बेर

- बेर के फल वृक्ष पर सूक्ष्म तत्वों एवं वृद्धि नियामक दवा (नेप्थलीन एसीटीक एसिड) का 20 बूंद/लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। यदि पत्तियों पर पत्ती छेदक कीट का प्रकोप दिखें तो एण्डोसल्फान का 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें।

आंवला

- आंवला में फलों के झड़ने को कम करने हेतु वृद्धि नियामक दवा छिड़कें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह

- वर्षा रोपित पौधों को छांट कर सही आकार दें।
- जीवनयापन हेतु पानी देकर थालों की गुड़ाई करें।
- पुराने पौधों को कटाई-छंटाई द्वारा सही आकार दें।
- रोपित पौध को जीवन यापन हेतु 15-20 दिन के अंतरात पर सिंचाई करते रहें।
- प्राकृतिक एवं बोए हुए चरागाहों से घासों की कटाई आरंभ करें। घास की कटाई के बाद उन्हें इकट्ठा करें। खेतो में छोटे बंडल बनाकर सूखने के लिए रखें। सूखे घास की गठरी बनाएं।
- चरागाहों एवं बंजर भूमियों पर जहां चारा घासें बहुतायत से लगाई गई हैं उनसे प्राप्त चारा फसलों के बीज पक जाते हैं इन्हें श्रमिकों द्वारा, बैल चालित अथवा ट्रैक्टर चालित बीज एकत्रीकरण यंत्र के द्वारा एकत्र किया जा सकता है।

फसल सुरक्षा

- खरीफ में बोई गई फसलों की निराई गुड़ाई करें।
- ज्वार, बाजरा, मक्का, लोबिया एवं ग्वार में पत्तों पर लाल रंग के भूरे रंग के धब्बे दिखाई दें तो डीएम-45 का 0.25 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
- दवा के छिड़काव के 15-20 दिनों तक फसल काट कर जानवरों को न खिलाएं।
- जलभराव के समय भी घासों की बढ़वार के लिये नत्रजन की आवश्यकता होती है अत: यूरिया के बड़े दाने अथवा पर्त कोटेड यूरिया से नत्रजन की पूर्ति करनी चाहिए।

पशुपालन

चारे का संरक्षण

- वर्षाऋतु में यद्यपि वर्षा के जल की पर्याप्त उपलब्धता के कारण पशुओं को चारा प्राप्त होता है और इस समय आवश्यकता से अधिक चारा उपलब्ध रहता है इस चारे का सही रूप में संरक्षण करें और भविष्य में आने वाली चारे की कमी से बचें।

चारा बैंक

- वर्षा के जल का सही एवं स्वस्थ संरक्षण बनाये रखें। अतिरिक्त चारे को चारा बैंक के रूप में एकत्र कर सामुदायिक व्यवस्था के तहत बड़े स्तर पर भी पशुओं को खिलाया जा सकता है।

अक्टूबर

दलहन एवं तिलहनी फसलें

गेहूं, जई एवं जौ

- गेहूं, जई, जौ एवं रबी में बोयी जाने वाली दलहन एवं तिलहनी फसलों के लिये खेत

बेर

ज्वार

गिनी

लोबिया

आंवला

तैयार करने के लिए खरीफ फसलों से खाली करें।

- यदि खेत तैयार हो गया हो तथा तापमान कम हो तो द्वितीय पखवाड़े में गेहूं की बुवाई की जा सकती है।

बरसीम

- बरसीम की बुवाई के लिये खेत तैयार कर पानी की उपलब्धता होने पर बुवाई करें।

मूंगफली

- समय से बोयी गयी मूंगफली में सिंचाई कर पर्याप्त नमी बनाएं रखें।
- अगेती बोई गई मूंगफली की खुदाई कर रबी फसलों के लिये खेत तैयार करें।

धान

- धान के खेत में पर्याप्त नमी बनाएं रखें।
- धान उगाने वाले क्षेत्रों में खड़ी धान की फसल में चारे के लिये बरसीम तथा तेल पैदा करने वाली फसलों में सरसों के बीज का छिड़काव किया जा सकता है जिससे धान की कटाई के साथ-साथ रबी फसल बढ़कर तैयार हो जाती है और 35 से 40 दिन के अंतराल पर पशुओं के लिये बरसीम का पौष्टिक चारा उपलब्ध रहता है।

बहुवर्षीय घास

- बहुवर्षीय घासों एवं बहुकटाई वाली ज्वार की कटाई करें। कटाई के पश्चात् फसलों को सींचकर 30-40 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर का छिड़काव करें।

रबी की फसल

- रबी की फसलों की बुवाई का उत्तम समय शुरू होता है अत: खरीफ की फसलों की उस प्रकार कटाई करें कि वर्षा की नमी पर खेतों की तैयारी कर लें। जिन किसान भाइयों के पास पानी के साधन उपलब्ध हैं वह जई, बरसीम, रिजका, सैंजी, शलजम, चारे हेतु चाइना कैवेज आदि की बुवाई करें।
- रबी फसलों की बुवाई के लिये विभिन्न साधनों द्वारा भूमि की सतहों में नमी का संरक्षण अवश्य करें और इसके लिये खेत तैयार कर आखिरी जुताई बखर से करें, प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य लगायें, खेतों को तैयार करने हेतु खुली नाली बनाने वाले यंत्रों की अपेक्षा रोटावेटर एवं रोटासीडड्रिल का बुवाई के लिये प्रयोग करना चाहिए।

मुख्य एवं सहफसल

- सम्पूर्ण उत्तर भारत में गन्ना और आलू पंक्तियों में बोए जाते हैं अत: इन फसलों के खाली स्थानों पर बरसीम,रिजका, सैंजी, जई की फसलों की बुवाई करनी चाहिए।
- इस पद्धति से खेती करने से मुख्य एवं सहफसल दोनों को ही लाभ होता है।

बागवानी

बेर एवं अनार

- बेर एवं अनार में कीट एवं रोगों से बचाव तथा आंवला में नमी की कमी हो तो पानी लगाएं।
- नव रोपित पौधों की देखरेख करें।
- जीवनयापन हेतु 15-15 दिनों के अंतराल पर हल्की सिंचाई करें एवं थालों की गुड़ाई करें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह

- नव रोपित पौधों की देख रेख एवं पुराने पौध की आकार देने का कार्य करें।
- घासों की कटाई कर छोटे छोटे ढ़ेर बनाकर रखें। जब कुछ सूख जाएं तो गज्जी बनाएं। कटे हुए घास में क्रमबद्ध पशु चराई कराएं।

फसल सुरक्षा

बरसीम

- बुवाई से पूर्व बरसीम के बीज को राइजोबियम कल्चर एवं थीरम (0.25 प्रतिशत) और बेविस्टिन (0.20 प्रतिशत) से उपचारित करें।
- बरसीम के खेत में पानी भर कर बीज का छिड़काव करें।

रिजका (लूसर्न)

- रिजका (लूसर्न) को पंक्तियों में कम गहराई पर बोएं।

बीज एकत्रित करना

- रबी में बोई जाने वाली फसलों की उन्नत एवं रोग रोधी प्रजातियों यथा बरसीम (बुन्देल बरसीम-1, 2 एवं वरदान), रिजका/लूसर्न (आर.एल-88, आनन्द-2 तथा चेतक) तथा जई (जेएचओ-822, जेएचओ-820 अथवा केन्ट) के बीजों को समुचित मात्रा में एकत्रित करें।

पशुपालन

- पशुओं के स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान देना चाहिए।
- पशु घर को साफ रखें। गोबर व मूत्र को दिन में दो बार अवश्य हटाएं।
- समय-समय पर कीटनाशक-जैवनाशक दवाओं जैसे मैलाथियान का 1 प्रतिशत का घोल फर्श व दीवारों पर छिड़कना चाहिए।

परजीवी नाशक दवा

- चूंकि इस समय तक वर्षा लगभग खत्म हो चुकी होती है। अत: पशुओं को अन्त: परजीवी नाशक दवा पशुचिकित्सक की सलाह पर वर्ष में दो बार (छ: माह के अंतराल) देना चाहिए।
- क्योंकि यदि पशु के पेट में कीड़े हैं तो पशु को दिया गया अधिकांश पोषक तत्वों का लाभ पशु को नहीं मिल पाता है तथा पशु का उत्पादन कम हो जाता है।

सांस की बीमारी

- इस मौसम में पशुओं को अधिकतर सांस की बीमारी होती है। अत: पशु को खांसी व सर्दी से बचाव का उपाय करना चाहिए।

खुरपका-मुंहपका रोग

- इस मौसम में एक अन्य बीमारी मुख्यत: खुरपका-मुंहपका देखने में आती है। जो कि संक्रामक होती है। इसमें मृत्यु नहीं होती

परन्तु इससे पशु की कार्य व उत्पादन क्षमता अत्यन्त कम हो जाती है।

- यह रोग पहले खुरों में होता है और चाटने से मुंह में आ जाता है।
- रोग होने पर पशु को तेज बुखार आता है, मुंह व जीभ पर छाले आ जाते हैं, पशु के मुंह से लार बहती है, खुरों की बीच की जगह में भी छाले आ जाते हैं।
- इस बीमारी के फैलने पर, प्रभावित भाग को लाल दवा 1 प्रतिशत से उपचारित करना चाहिए।

रोग से बचाव

- खुरपका-मुंहपका रोग से बचाव हेतु स्वस्थ पशु को दो बार टीके लगवाने चाहिए। प्रथम टीका अक्टूबर-नवम्बर में तथा बूस्टर टीका प्रथम टीके के एक माह बाद लगवाना चाहिए।
- यह टीका प्रतिवर्ष लगवा लेना चाहिए।

भेड़ों का ऊन

- अक्टूबर-नवम्बर में भेड़ों का ऊन जरूर काटना चाहिए। यदि सम्भव हो तो यह कार्य अक्टूबर के प्रारम्भ में कर लेना चाहिए। तथा दूसरी बार मार्च-अप्रैल में काटना चाहिए।

नवम्बर

गेहूं

- गेहूं की बुवाई पूर्ण कर लें। बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। इस समय बोने के लिए 100 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर के दर से प्रयोग करें।
- बीज को 2 ग्राम कैप्टान अथवा 2-5 ग्राम थीरम प्रति हेक्टेयर की दर से उपचारित करके बुवाई के समय 60 किलोग्राम फास्फोरस एवं 40 किलोग्राम पोटाश का प्रयोग करें। शेष आधी मात्रा बुवाई के 40-45 दिन बाद डालें।
- अगर खेत में जस्ते की कमी हो तो बुवाई के समय 25 किलोग्राम जिंक सल्फेट का प्रयोग करें।
- अक्टूबर के द्वितीय पखवाड़े में बोए गए गेहूं में 20-25 दिन की अवस्था में 5-6 सेमी. गहरी पहली सिंचाई करें।
- बुवाई कतारों में हल के पीछे या कूड़ों में या फर्टीसीडड्रिल से करें। समय से बोए गए गेहूं में 20-25 दिन पर 5-6 सेमी की पहली सिंचाई करें।

जौ, जई

- जौ, जई आदि की बुवाई भी उपर्युक्तानुसार पूर्ण करें।

चना, मटर, मसूर

- अक्टूबर के अंत में तैयार खेतों में चना, मटर, मसूर आदि की बुवाई करें। बुवाई हल के पीछे कूड़ों में या कतारों में करें।

ज्वार

- यदि ज्वार की कटाई नहीं की गई हो तो शीघ्र ही कर लें।

शलजम

- सितम्बर में यदि शलजम आदि की फसल चारे के लिये बोई गई हो तो कटाई पूर्ण कर लें।

बरसीम, रिजका, सेंजी एवं जई

- बरसीम, रिजका, सेंजी, जई की फसलों की बुवाई खेत के एक कोने में न करके रबी मुख्य फसलों गेहूं, जौ, चना, मटर आदि की पंक्तियों के मध्य में करें क्योंकि चारा फसलें अन्नवाली फसलों से प्रतिस्पर्धा नहीं रखती। अत: इस प्रक्रिया से पौष्टिक चारा प्राप्त होता ही है साथ ही भूमि की भौतिक दशा में सुधार के साथ साथ उर्वराशक्ति में भी बढ़ोतरी दर्ज होती है।
- चारा फसलों में मुख्यरूप से बरसीम, रिजका, के साथ 10 प्रतिशत सरसों के बीज को मिश्रित कर बोना चाहिए।

बहुवर्षीय घास

- बहुवर्षीय घासों की कटाई करें। इसके बाद यह सुषुप्तावस्था में चली जाती है। जिससे अगली कटाई तापमान बढ़ने पर फरवरी-मार्च में ही प्राप्त होती है।
- वर्षा ऋतु में रोपित पौध की देख रेख करते रहें। थालों में हल्की पानी देकर गुड़ाई करें।
- खेतों में यदि 8 से 10 मी. की दूरी की घासों की पुरानी जड़ें जो सड़ गल गई हों कर काले रंग की हो जाती हैं उन्हें श्रमिकों अथवा ऑफबारिंग ट्रैक्टर चालित मशीन अथवा कल्टीवेटर से कटाई करते रहना चाहिए जिससे नई जड़ों एवं घासों के किल्लों को निकलने में आसानी होती है।

बागवानी

आंवला

- आंवले में 15 नवम्बर के बाद तुड़ाई करें।

अमरूद

- अमरूद में भी दो तीन दिन के अंतराल पर तुड़ाई करें।

बेर

- बेर में पाउडरी मिल्डयू से बचाने हेतु गंधक युक्त दवा का 1.0 प्रतिशत छिड़काव करें।

चरागाह, वन एवं उद्यान चरागाह

हरा चारा

- पुराने पौधों/वृक्षों से प्रजातियों के आधार पर आवश्यकतानुसार कृत्तन या कटाई छंटाई कर हरा चारा प्राप्त करें।
- नए पौधों की देख रेख करें।
- खेतों की मेढ़ों पर लगे सुबबूल, ढेंचा, नीम, खेजडी, भीमल तथा अन्य काटने एवं छांटने योग्य वृक्षों की जहां स्थापना की गई है इन वृक्षों की कटाई एवं छंटाई करते रहना चाहिए जिससे पशुओं हेतु चारा, घरों में उपयोग हेतु

ईंधन तथा यथा आवश्यकता फल, फूल और गोंद आदि प्राप्त होता है।

सूखी घास

- सूखी घास को खूब टाइट बांधकर कठोर बंडल बनाकर रखें। जिसे चारे की कमी के समय पशु को दें। पुराने घासों के मैदान में या कटे घास के मैदान में क्रमबद्ध चराई कराएं।

फसल सुरक्षा

जई

- जई के बीज को ट्राइकोडर्मा 5 ग्रा. किग्रा से उपचारित कर बुवाई करें।

बरसीम एवं रिजका

- बरसीम एवं रिजका की फसलों की सिचाई करें।
- बहुकटाई वाली फसलों की कटाई समय पर करें।
- खेत में खड़ी फसलों में आवश्यकतानुसार खरपतवार नियंत्रण करें।

पशुपालन

- पशुओं में सर्दी का प्रकोप कम करने के लिए उन्हें 30 ग्राम हल्दी 250 ग्राम गुड़ में मिलाकर देना चाहिए। खांसी कम करने के लिए तारपीन के तेल का वफारा दिया जा सकता है।
- छोटे पशुओं खासतौर से भेड़ व बकरियों में जो कि मुख्यत: चराई पर आधारित हों उन्हें फास्फोरस (डाई कैल्सिम फास्फेट) की 10-15 ग्राम मात्रा प्रतिदिन देनी चाहिए।
- अथवा डाईकैल्सिम फास्फेट की 1-2 किग्रा. मात्रा को एक कुन्तल दाने में मिलाकर खिलाना चाहिए।

दिसम्बर

गेहूं

- यदि गेहूं की बुवाई शेष हो तो बुवाई पूर्ण करलें। बुवाई के समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।
- इस समय बोने के लिए 125 किलोग्राम गेहूं के बीज प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें। बीज को 2 ग्राम कैप्टान या 2-5 ग्राम थीरम प्रति किलोग्राम की दर से उपचारित करके बोयें।
- बुवाई के समय 60 किलोग्राम नत्रजन, 60 किलोग्राम फास्फोरस एवं 40 किलोग्राम पोटाश का प्रयोग करें।
- शेष आधी मात्रा बुवाई के 40-45 दिन बाद डालें। अगर खेत में जस्ते की कमी हो तो बुवाई के समय 25 किलोग्राम जिंक सल्फेट का प्रयोग करे।
- समय से बोये गए गेहूं तथा जई में 20-25 दिन की अवस्था पर 5-6 सेमी की पहली सिंचाई करें। तथा दूसरी सिंचाई 40-45 दिन पर कल्ले निकलने की अवस्था पर करें।

मसूर

- इस माह में मसूर की बुवाई करने के लिए 55-75 किलोग्राम बीज का प्रयोग करें।
- बुवाई कतारों में हल के पीछे या कूड़ों में या फर्टीसीडड्रिल से करें।
- बुवाई के 45-60 के बीच पहली सिंचाई करें।
- बुवाई के 30-35 दिन बाद मसूर में गुड़ाई करें।

चना

- चने में बुवाई के 45-60 के बीच पहली सिंचाई करें।
- बुवाई के 30-35 दिन बाद चना में गुड़ाई करें।

राई, सरसों

- राई-सरसों में 55-65 दिन पर फूल निकलने के पहले दूसरी सिंचाई अवश्य करें।
- चारा फसलों के साथ 10 प्रतिशत भाग पर सरसों के बीज जो मिश्रित कर बोया गया था उसकी कटाई आवश्यक रूप से करनी चाहिए अन्यथा सरसों की अधिक बढ़वार चारा फसलों की पैदावार को घटा देती है।

जौ एवं मटर

- जौ एवं मटर में पहली सिंचाई बुवाई के 30-35 दिन पर करें।
- बुवाई के 30-35 दिन बाद मटर में गुड़ाई करें।

मटर

बहुवर्षीय दीनानाथ घास

सरसों

मक्का

- रबी मक्का की फसल में बुवाई के 20-25 दिन की अवस्था पर निराई-गुड़ाई करके सिंचाई कर दे तथा समुचित नमी के लिये समय समय पर सिंचाई करते रहें।
- मक्का की फसल के 30-35 दिन की अवस्था पर (पौधों के लगभग घुटने तक की ऊंचाई) 40 किलोग्राम नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से पहली बार छिड़काव करें एवं दूसरा छिड़काव जीरा निकलने के पूर्व करनी चाहिए।

बरसीम

- बरसीम में आवश्यकतानुसार 14-18 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें।
- बरसीम, रिजका, सैंजी, जई की फसलें बढ़वार लेकर कटाई योग्य हो जाती हैं।
- बलुई-दोमट भूमि में नत्रजन की शेष 40 किलोग्राम मात्रा का दूसरी सिंचाई के बाद छिड़काव करें।
- कटाई : बुवाई के 50-55 दिन बाद बरसीम एवं 55-60 दिन बाद जई की चारे के लिये कटाई करें। इसके पश्चात् बरसीम की कटाई 25-30 दिन के अंतराल पर करते रहें।

बागवानी

- नए रोपित पौधों को घास-फूस से ढंक कर पाले से बचाएं। धुआं या सिंचाई करके भी पाले से बचा सकते हैं।
- आंवले-अमरूद की तुड़ाई कर विपणन करें।
- बेर को गिलहरी और पक्षियों से बचाएं।

चरागाह एवं वन चरागाह

- पुराने स्थापित चारा वृक्षों से प्रजाति के अनुसार 20-30 प्रतिशत कटाई-छंटाई कर हरा चारा प्राप्त करें।
- नए रोपित चारा वृक्षों की देख रेख करें।
- सूखे घास के वण्डल को पशु चारा के रूप में प्रयोग करें।
- प्राकृतिक चरागाह में क्रमबद्ध चराई कराएं।

फसल सुरक्षा

गेहूं

- गेहूं में गेहूं के मामा की रोकथाम के लिये 2.0 किलोग्राम आइसोप्रोटूरान (75 प्रतिशत) 500 लीटर पानी में घोलकर अथवा सल्फोसल्फयूरान 25 ग्राम सक्रिय तत्व 250-300 लीटर पानी में घोल कर पहली सिंचाई के बाद परन्तु 30 दिन की अवस्था के पहले छिड़काव करें।
- सल्फोसल्फयूरान के छिड़काव से चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार एवं गेहूं का मामा का नियंत्रण हो जाता है।
- यदि गेहूं के मामा का कम अनुपात तथा चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार का अनुपात ज्यादा हो तो 625 ग्राम 2, 4 -डी सोडियम साल्ट (80 प्रतिशत डब्ल्यूसी) का 500-600 लीटर पानी में छिड़काव 30-35 दिन की अवस्था पर करें।
- गेहूं में बलुई-दोमट भूमि के लिये 40 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर एवं भारी भूमि में 60 किलोग्राम की दर से पहली सिंचाई के बाद टाप ड्रेसिंग करें।

जौ

- जौ में भी उक्त खरपतवार नियंत्रण समग्र रूप से कार्य करती है।

जई

- जई में 20-25 दिन की अवस्था पर 20 किलोग्राम नत्रजन/हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

बरसीम

- बरसीम की फसल में यदि तना विगलन रोग के लक्षण दिखें तो बहुकटाई वाली फसलों की कटाई समय पर करें।

पाले से फसल का बचाव

- शरद ऋतु के कारण वातावरण का तापमान काफी कम हो जाता है अत: सभी प्रकार की फसलों को पाले से बचाना चाहिए।
- विशेष रूप से मुलायम फसलें शीघ्र एवं अधिक मात्रा में प्रभावित होती हैं अत: फसलों में पानी लगाना चाहिए।
- जिस दिन पाला गिरने की आशंका हो उस दिन खेतों के आस पास धुआं कर देना चाहिए।

पशुपालन

- यदि इस समय वातावरण में बादल नहीं हैं और पशुओं को खिलाने के अतिरिक्त चारा बचा हुआ है तो उसे छाया में सुखाना चाहिए और गर्मी के मौसम के लिये एकत्र कर रख लेना चाहिए।
- दिसम्बर की चटकीली धूप में सुबबूल, ढेंचा, नीम, खेजड़ी, भीमल तथा अन्य काटने एवं छांटने योग्य वृक्षों की छंटाई के बाद पत्तियां एवं डंठल आदि को छाया में सुखाकर गर्मी के मौसम में जब कम चारा उपलब्ध रहता है उस समय पशुओं को खिलाना चाहिए।

गेहूं

जई

बरसीम

बहुकटाई वाली ज्वार

गिनी उगाएं- एक बार जरूर आजमाएं

शेषमणि मिश्र एवं हरीश पाण्डेय

गिनी एक गुच्छ (टसक) से भरपूर पैदावार

भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झाँसी में 100 से अधिक चारा फसलों पर अनुसंधान कार्य चल रहा है। इनमें से आपके लिए क्या अधिक उपयोगी होगा यह गम्भीरता पूर्वक विचार करना पड़ता है। बहुत सारी चारा फसलें, नाना प्रकार की जलवायु तथा मिट्टी, विभिन्न समूह के किसानों की आवश्यकता आदि को ध्यान में रखकर हम अपने अनुसंधान की दिशा तय करते हैं। एक ऐसी चारा फसल जो वर्षभर आपके पशुओं को सुपाच्य और पौष्टिक हरा चारा प्रदान करे उसकी जानकारी शायद आपके लिए अधिक उपयोगी साबित हो। ऐसी ही एक चारा फसल है गिनी घास जिसे अंग्रेजी में पेनिकम स्पेसीज के नाम से जाना जाता है।

गिनी घास लगभग पूरे वर्ष उत्तम गुणवत्ता वाला हरा चारा प्रदान करने वाली मुख्य चारा फसल है। मुख्य रूप से गिनी घास गर्म अफ्रीकी प्रदेशों में पायी जाती है परन्तु 1793 से ही भारत में उगाई जाने वाली अन्य घासों की तुलना में उत्पादन एवं गुणवत्ता की दृष्टि से श्रेष्ठता बनाये हुए है। यह गर्म और अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में अधिक पैदावार देती है। परन्तु अपेक्षतया कम गर्म या कम सिंचित या असिंचित क्षेत्रों में भी अधिक पैदावार देने में सक्षम है। यह वृक्षों, बागानों व झाड़ियों की छाया में भी अपने विशिष्ट गुण के कारण अच्छा एवं उच्चकोटि का चारा प्रदान करती है। इसमें विपरीत परिस्थितियों में भी जीने की क्षमता है तथा समस्याग्रस्त मृदाओं जैसे की ऊसर में 9.0 पी.एच. मान तक भी कुछ प्रजातियां पैदावार देने में सक्षम है। यह एक बहुवर्षीय घास है, और एक बार लगाने के बाद इसे 20-25 वर्षों तक भी चारे के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

वितरण

पहाड़ी इलाकों को छोड़कर लगभग पूरे भारत में इसकी खेती की जाती है। अधिक वर्षा एवं वर्षभर उच्च तापमान के कारण दक्षिण भारत की जलवायु इसके लिये अधिक उपयुक्त है जहां वर्ष में 8-9 कटाइयां ली जाती है। उचित प्रबंधन के साथ उत्तर भारत में, चार से पांच कटाई ली जाती है।

मिट्टी का चुनाव

जलवायु एवं भूमि: यह गर्म एवं आर्द्र परिस्थितियों की फसल है 1000 से 1200 मि.मी. अच्छी वितरण वाली वर्षा तथा 70 प्रतिशत वायुमण्डल आर्द्रता उसकी वृद्धि के लिये उपयुक्त है। उपजाऊ एवं गहरी दोमट तथा मटियार दोमट मिट्टी इसके लिये अच्छी हाती है। अधिक मात्रा में गोबर अथवा कम्पोस्ट की खाद देकर इसे अपेक्षतया बलुई मिट्टियों में भी उगाया जा सकता है। पर ध्यान रखें, हर कटाई के बाद 50 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हे. डालना न भूलें।

यह नाना प्रकार की मृदाओं में उगने तथा बढ़ने की क्षमता भी रखती है। पथरीली तथा कम गहराई वाली मिट्टियों में भी यह अच्छी पैदावार देती है क्योंकि यह विषम परिस्थितियों में भी जिन्दा रहने की तथा बढ़ने की क्षमता रखती है। जो भी मिट्टी आपके पास है उसमें आप इसे लगा सकते हैं। बस थोड़े प्रबंधन से आपकी समस्या दूर हो जायेगी।

बुवाई का समय

उत्तर भारत में सिचिंत दशाओं में मार्च से अगस्त तक इसकी बुवाई की जा सकती है, परन्तु फरवरी-मार्च एवं जून-जुलाई के महीने अधिक अच्छे साबित हुए हैं।

लगाने की विधि

इस घास को बीज तथा रूट स्टॉक (जड़ों द्वारा) दोनों ही माध्यमों से लगाया जा सकता है। बीज की नर्सरी लगाकर, एक महीने उपरान्त उनकी 50 सेमी. दूर लाइनों में पौधे से पौधे की दूरी 25 सेमी. रखते हुए रोपाई की जाती है। बरसात का मौसम अर्थात जुलाई-अगस्त इसके लिए अधिक उपयोगी महीना है परन्तु यदि सिंचाई की सुविधा हो तो फरवरी महीने में भी इसे लगाया जा सकता है।

उर्वरक

क्योंकि यह अधिक पैदावार देने वाली घास है अत: इसकी नत्रजन तथा फास्फोरस की आवश्यकता थोड़ी अधिक होती है। यदि पोटाश की मिट्टी में कमी हो तो 50 कि.ग्रा. पोटैशियम भी रोपाई के समय 60 कि.ग्रा. डाइअमोनियम फास्फेट के साथ खेत में डाल दें। हर कटाई के बाद 40 कि.ग्रा. डाई अमोनियम फास्फेट प्रति हे. डालने से पैदावार बढ़ जायेगी।

सिंचाई

बीज बोने के उपरान्त यदि खेत में नमी कम हो तो तुरन्त एक हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। गहरी सिंचाई न करें क्योंकि इससे इसके बीज मिट्टी में अधिक गहराई में चले जायेंगे और जमेंगे नहीं। इसके बाद जब तक अंकुरण पूरा न हो जाये हल्की सिंचाई 4-5 दिन के अन्तर से करनी चाहिए, जिससे खेत की सतह पर पपड़ी न

बने। बीज छोटा होने के कारण इसमें पपड़ी को तोड़कर निकलने की क्षमता नहीं होती।

अन्त:कर्षण

यह बहु-वर्षीय फसल है। एक बार लगाने से 3-4 वर्ष तक खेत में रहती है। दक्षिण भारत में इसे 25 वर्षों तक भी उगाते है। समय-समय पर कतारों के मध्य जुताई-गुड़ाई, करते रहने से बहुवर्षीय खरपतवार खेत में उग नहीं पाते। पंजाब गिनी घास प्रजातियों में लाइनों के बीच खरपतवार न के बराबर होते हैं। अत: वर्ष में कम से कम दो बार वर्षा आरम्भ होने के समय तथा वर्षा ऋतु के बाद जुताई-गुड़ाई आवश्यक है।

खरपतवार तथा बीमारी और कीड़े मकोड़े

एक बार स्थापित हो जाने के बाद यह किसी भी अन्य घास को अपने नीचे नहीं उगने देती अत: इसमें खरपतवार नियंत्रण की कोई विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती है। इसमें बीमारी तथा कीड़ों का भी कोई प्रकोप नहीं पाया जाता है।

प्रजातियां

पुरानी प्रजातियों में मकुनी तथा हामिल मुख्य है। पंजाब विश्वविद्यालय द्वारा विकसित अन्य प्रजातियों जैसे पी.जी.जी.-1, पी.जी.जी.-9, पी.जी.जी.-13, पी.जी.जी.-14, पी.जी.जी.-19 आदि वर्ष भर हरा चारा प्रदान करती है।

उपज

शुष्क क्षेत्रों में यह 600-800 कु./हे. तथा वर्षा वाले क्षेत्रों या सिंचित क्षेत्रों में 1300-1400 कु./हे. चारा प्रदान करती है। उत्तर भारत में वृद्धि काल कम होने से वर्ष में केवल 5 कटाइयां ही मिलती हैं, जिनसे कुल 1000 से 1200 कुन्तल हरा चारा प्रति हेक्टेयर प्राप्त होता है। इससे अधिक पैदावार के लिए भरपूर मात्रा में नत्रजन का प्रयोग करना पड़ेगा।

कटाई

रोपाई के बाद पहली कटाई लगभग 50 से 55 दिनों में प्राप्त की जाती है, परन्तु उसके पश्चात् 25 से 30 दिन में इसकी एक कटाई प्राप्त कर सकते हैं। उत्तर भारत में दिसम्बर से फरवरी तक इसकी बढ़वार थोड़ी धीमी होती है परन्तु मार्च से तापमान बढ़ने के साथ इसकी वृद्धि में पर्याप्त तेजी आ जाती है।

गिनी घास पशुओं के लिए एक उत्तम तथा पौष्टिक चारा है तथा किसानों को अवश्य पसंद आयेगी। किसान भाइयों को इसे एक बार अवश्य आजमानाा चाहिए। बीज या रूट स्टॉक की प्राप्ति के लिए आप निदेशक, भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी से सम्पर्क करने में जरा भी संकोच न करें। दुधारू पशुओं के लिए तो यह विशेष उपयुक्त है।

गर्मियों में भी हरी भरी रहने की क्षमता

विशेष प्रबंधन

गिनी घास को काटने के बाद जलाकर तुरन्त सिंचाई कर देना अत्यन्त लाभकारी है। जलाने के उपरान्त उगने वाले पौधे अधिक क्षमता वाले होते हैं। कटाई के पश्चात् क्योंकि पूरा गुच्छ (टसक) हरा ही रहता है, अत: सुचारू रूप से जलाने की प्रक्रिया सम्पूर्ण नहीं हो पाती। इस समस्या से छुटकारा पाने के लिए कुछ सूखी पत्तियां पूरे खेत में विखेर कर आग लगाएं। आग लगाने वाले दिन यह देख लें कि तेज हवायें न चल रही हों तथा पड़ोस के खेतों में सटकर कोई सूखी घास आदि न पड़ी हो।

गिनी की खड़ी फसल को भी जला सकते हैं।

जलाने के तुरन्त बाद एक सिंचाई अवश्य कर दें। जून में जलाने के बाद कुछ दिनों में वर्षा आ जाती है। अन्य महीनों में जलाने पर जब तक नये कल्ले अच्छी तरह न आ जाएं, सिंचाई की थोड़ी अधिक आवश्यकता पड़ेगी।

विशिष्ट पोषक तत्व

विशिष्ट पोषक तत्व हम उन पोषक तत्वों को कहते है, जिनकी आवश्यकता प्रजननकाल के दौरान बढ़ जाती है भले ही वह वानस्पतिक वृद्धि के लिए पर्याप्त हों। बुन्देलखण्ड की लाल मिट्टियों में उगाई जाने वाली गिनी घास से यदि बीज भी लेना है तो फूल आने के प्रारम्भ में ही 50 कि.ग्रा. पोटैशियम आक्साइड का प्रयोग अवश्य करें। इससे आपको अच्छे चमकदार दाने तो मिलेगे ही साथ ही बीज की पैदावार में पर्याप्त बढ़ोतरी मिलेगी। पोटैशियम के प्रयोग का बीज उत्पादन पर प्रभाव सारणी-1 में दिया गया है। इसका बीज 320 रू. प्रति किग्रा. बिकता है।

सारणी 1. पोटैशियम प्रयोग का गिनी घास के बीज-उत्पादन पर प्रभाव

पोटैशियम प्रयोग की दर (किग्रा./हे.)	बीज-उपज (किग्रा. हे.)
0	474
25	559
50	602
75	603
100	632
125	675
औसत	591

पोटैशियम के प्रयोग से बुन्देलखण्ड की लाल मिट्टियों मे पंजाब गिनी घास की बीज पैदावार में बढ़ोतरी पायी गयी। परन्तु सारणी एक में दिये गये बीज उत्पादन की मात्रा को कम से कम 50 किग्रा. पौटेशियम आक्साइड के प्रयोग से ही बढ़ाया जा सकता है। परन्तु यह अभी तक निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है, कि पोटैशियम का प्रयोग अन्य मृदाओं जैसे की गंगा यमुना की जलोढ़ मृदाओं में भी बीजोत्पादन में लाभकारी होगा। ❑

कंकड़ीली -पथरीली भूमि के लिए उपयुक्त धवलू घास

एस एन राम

धवलू घास (क्राइसोपोगान फल्वस)

धवलू घास (क्राइसोपोगान फल्वस) एक बहुवर्षीय घास है। इसकी वृद्धि सीधे 1.5 से 2.0 मीटर तक होती है। पत्तियॉ 10 से 25 सेंटीमीटर लम्बी और 0.3 से 0.5 सेंटीमीटर चौड़ी गहरे हरे रंग की होती है। इसे कंकड़ीली एवं पथरीली तथा ऐसी भूमि जिनमें पानी रोकने की क्षमता बहुत ही कम होती है, उनमें आसानी से उगाया जा सकता है। यह घास 250 से 850 मिलीमीटर वर्षा वाले क्षेत्रों में पायी जाती है।

इसमें सूखा सहन करने की क्षमता अधिक होती है। जिन क्षेत्रों में मिट्टी की गहराई बहुत कम होती है ऐसे क्षेत्रों में भी इसे सफलता पूर्वक उगाया जा सकता है। भूमि का कटाव रोकने के लिए भी यह एक बहुत उपयोगी घास है। इसका उपयोग चराई में या काटकर खिलाने के रुप में किया जाता है। इसमें क्रूड प्रोटीन 4.6- 5.3 प्रतिशत होता है।

उन्नतिशील प्रजातियॉ

इस घास की दो प्रमुख प्रजातियां चण्डीगढ़ और मऊ हैं। मऊ की उपज चण्डीगढ़ की अपेक्षा अधिक होती है।

बुवाई तकनीक

इस घास की स्थापना बीज, नर्सरी में पौध तैयार करके तथा पुराने पौधों की जड़दार कल्लों की रोपाई करके की जा सकती है। इसकी स्थापना के लिए जुलाई का महीना सबसे उत्तम होता है। बीज द्वारा स्थापित करने पर प्रति हेक्टेयर 6 से 7 किलो ग्राम बीज की बुवाई करते है। रोपाई करके स्थापित करने पर एक स्थान पर दो पौधे लगाते हैं। कतार से कतार की दूरी 50 सेन्टीमीटर रखते हैं। लेकिन जब घास और दलहनी चारा को एक साथ लगाते हैं तो घास की कतार से कतार की दूरी 100 सेंटीमीटर रखते हैं।

खेत की तैयारी

बीज की बुवाई से पहले खेत की एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल तथा दो जुताइयां देशी हल या हैरो से कर लेते हैं। खेत से खरपतवार एवं झाड़ियों को जड़ सहित तथा पत्थर आदि निकाल देना चाहिए। अंतिम जुताई के बाद पाटा चला देते हैं जिससे खेत समतल और मिट्टी भुरभुरी हो जाये।

खाद एवं उर्वरक

खेत की तैयारी के समय 8-10 टन गोबर या कम्पोस्ट की खाद मिट्टी में मिला देनी चाहिए। इसके अलावा बुवाई के समय प्रति हेक्टेयर 40 किग्रा. नाइट्रोजन, 30 किग्रा. फास्फोरस और 30 किग्रा. पोटाश का प्रयोग करते है। बाद के वर्षों में भी खाद एवं उर्वरकों की इसी मात्रा को वर्षा होने पर जुलाई माह में खेत में डालते हैं।

खरपतवार नियंत्रण

स्थापना के वर्ष में बुवाई या रोपाई के एक महीने बाद एक निराई कर देनी चाहिए जिससे कि पौधे भलि-भॉति स्थापित हो जाएं।

कटाई एवं चराई प्रबंध

स्थापना के वर्ष में अक्टूबर के अन्त में या नवम्बर के मध्य में केवल एक कटाई करते हैं। दूसरे वर्ष से 2 या 3 कटाइयां ली जा सकती है। कटाइयों की संख्या वर्षा एवं उसके वितरण पर निर्भर करती हैं। जब चरागाह का उपयोग चराई द्वारा करते हैं तब परिवर्तित ढंग से चराई कराते हैं ताकि चरागाह को अधिक दिनों तक उत्पादनशील रखा जा सके। इसके अतिरिक्त जानवरों की संख्या चरागाह की चराई क्षमता के अनुसार ही रखनी चाहिए अन्यथा चरागाह शीघ्र ही क्षीण होने लगते हैं। साथ ही स्थापना वर्ष में घासों की चराई नहीं करानी चाहिए। चरागाह को अधिक दिनों तक बनाये रखने एवं अधिक उत्पादन के लिए घासों की कटाई 60 दिन के अन्तर पर 10-15 सेमी. की ऊँचाई से करनी चाहिए।

चारा उत्पादन

चारे की पैदावार वर्ष की कुल वर्षा एवं उसके वितरण पर निर्भर करती है। इस घास की सूखे चारे की औसत पैदावार 35-40 कुंतल प्रति हेक्टेयर होती है। लेकिन यदि खाद एवं उर्वरक देकर अच्छी तरह प्रबन्ध किया जाये तो इस घास की पैदावार 75-80 कुंतल प्रति हेक्टेयर प्राप्त की जा सकती है।

बीज उत्पादन

इस घास से बीज का उत्पादन 60-80 किग्रा. प्रति हेक्टेयर होता है और इसे उर्वरक देकर 100-125 किग्रा. प्रति हेक्टेयर प्राप्त किया जा सकता है। इस घास को लगाने के चार -पॉच वर्ष बाद जब उत्पादन कम होने लगे तो इसे पुन: स्थापित करना चाहिए।

शुष्क कृषि क्षेत्रों में चारा फसलों की सस्य क्रियाएं एवं उत्पादन तकनीक

राजीव कुमार अग्रवाल, जे. बी. सिंह एवं एस. बी. त्रिपाठी

सामान्यतया शुष्क क्षेत्र उन क्षेत्रों को इगिंत करते हैं जहां वार्षिक वर्षा 250 मिमी. से कम होती है। कम वर्षा होने से मौसम शुष्क होता है एवं वातावरण एवं पौधों की वाष्पन एवं वाष्पोत्सर्जन आवश्यकता अधिक होती है। ऐसी जलवायु क्षेत्र में, मध्यस्थलीय दशाएं बनाते हैं। अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में औसत वार्षिक वर्षा 750 मिमी. से अधिक होती है परन्तु जलवायु एवं भू-परिस्थितियों के कारण मृदा में नमी का सूचकांक -33.3 से -66.6 तक रहता है। इसके विपरीत वर्षा आधारित खेती का आशय औसत वार्षिक वर्षा तथा नमी सूचकांक आदि पर निर्भर न होकर, प्राप्त वर्षा एवं उससे संरक्षित नमी के आधार पर की जाती है। पूर्व अनुभवों से यह स्पष्ट हो गया है कि उपर्युक्त क्षेत्रों में वर्षा कम मात्रा में, अनिश्चित (मात्रा एवं तिथि) तथा असमान वितरण वाली होती है। देश के उत्तरी-पश्चिमी, दक्षिणी-पश्चिमी एवं दक्षिणी राज्यों के 110 जिलों में फैली हुई लगभग 97 मिलियन हेक्टेयर भूमि शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के अन्तर्गत है जहां पर मुख्य रूप से मोटे अनाज, तिलहन, दालें, कपास तथा चारों की खेती की जाती है। इन इलाकों में अनाज तथा चारा उत्पादन के लिए भूमि एवं जल प्रबन्ध की सामान्य प्रचलित तकनीकी में ऐसे परिवर्तन किए जाने चाहिए जिससे वर्षा की कमी, अनियमितता तथा सिंचाई के अभाव में भी लाभकारी फसलोत्पादन लिया जा सके। शुष्क क्षेत्रों में बहुधा खरीफ एवं रबी दोनों मुख्य फसलों के वृद्धिकाल में पानी की कमी होती है। अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में खरीफ के मौसम में प्राय: नमी की कमी नहीं होती परन्तु रबी के मौसम में वर्षा न होने से तथा सिंचाई की सुविधाओं के अभाव में भूमि में संरक्षित जल से ही फसलोत्पादन करना होता है।

इस प्रकार शुष्क एवं अर्द्धशुष्क जलवायु में सबसे महत्वपूर्ण कार्य वर्षा से प्राप्त जल का भूमि में अधिक से अधिक संरक्षण करना है। ताकि बोई गई फसलों द्वारा उचित समय पर उपयोग किया जा सके। यह क्षेत्र मुख्यत: एक फसली होते हैं जिनमें हल्की भूमि में खरीफ की फसल तथा भारी भूमि में रबी के फसलों के उत्पादन को प्राथमिकता दी जाती है। कभी-कभी मध्यम एवं भारी भूमि में दोनों फसलें भी उगाई जाती हैं। यह भूमि में उपस्थित नमी पर निर्भर करता है। शुष्क क्षेत्रों में भूमि-जल एवं फसल के समुचित प्रबंध के लिए निम्नलिखित कृषि क्रियाएं महत्वपूर्ण हैं।

1. **मेड़बन्दी :** खेत में वर्षा का पानी रोकने के लिए कम से कम 30 से.मी. ऊँची मेड़ बनाई जाती है यदि क्षेत्र ढालू है तो ढाल के विपरीत दिशा में मेंड़े बनाई जाएं जिससे पानी के बहाव में अवरोध उत्पन्न करके भूमि में नमी प्रवेश के लिये अधिक समय मिल सके। हल्की भूमि में मेड़ों को स्थिर रखने के लिए मूंज या अन्य बहुवर्षीय घासें लगाई जा सकती हैं।
2. **भू-परिष्करण :** हल्की भूमि में गहरी जुताई लाभकारी नहीं होती। देशी हल या अन्य उपकरण से 12-15 से. मी. गहरी जुताई पर्याप्त होती है। जुताई इतनी होनी चाहिए जिससे खरपतवार नष्ट हो जाएं तथा बुवाई के लिए खेत तैयार हो जाए। सामान्यत: यह कार्य 2-3 जुताइयों में हो जाता है। हर जुताई के बाद पाटा देना जरूरी है। भारी मिट्टियों में हर तीसरे वर्ष एक गहरी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करना चाहिए। इसके अतिरिक्त वर्षा आरम्भ से पूर्व ही गहरी जुताई या खुदाई द्वारा दूब या अन्य बहुवर्षीय खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिए। यदि क्षेत्र ढालू है तो जुताई-गुड़ाई ढाल के विपरीत दिशा में करना चाहिए।
3. **खाद का प्रबंध :** लगभग 8-10 टन अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर या कम्पोस्ट की खाद प्रति हेक्टर प्रतिवर्ष वर्षा आरंभ खेत की तैयारी के समय ही देना चाहिए। जीवांश खादों के प्रयोग से हल्की मिट्टी की संरचना में सुधार होकर जलधारण शक्ति तथा जलवायु का संचार होता है तथा भारी मिट्टी पोली एवं भुरभुरी हो जाती है। इसके अतिरिक्त फसलों को पोषक तत्व भी मिलते हैं। शुष्क क्षेत्रों में उर्वरकों को भूमि की सतह के नीचे कूड़ों में इस प्रकार डालना चाहिए की उर्वरक बीज की लाइन के 2-3 से. मी. नीचे पड़े। ऐसा देशी हल के पीछे दो चोंगे ऊपर-नीचे बाँधकर या सीडड्रिल की सहायता से किया जा सकता है।
4. **बुवाई :** बुवाई सदैव पंक्तियों में की जाती है इससे अन्त: कर्षण में सुविधा रहती है। कम पानी की दशा में बीज की दर सामान्य: से कम एवं कतारों की आपसी दूरी अधिक रखी जाती है जिससे प्रति इकाई क्षेत्र में पौधों की संख्या कम होने से सीमित नमी का अच्छा उपयोग होता है। ढालू भूमि में कतारों की दिषा ढाल के विपरीत होनी चाहिए।
5. **फसल चक्र :** इन मृदाओं में झकड़ा जड़वाली फसलों (जैसे बाजरा, ज्वार, लोबिया, मूंग एवं अन्य दलहनी फसलें) बोई जानी चाहिए। इसी प्रकार अधिक दूरी पर कतारों में उगाई जाने वाली फसलों जैसे मक्का एवं ज्वार के बाद घनी उगने वाली तथा भूमि को आच्छादित कर लेने वाली फसलें (जैसे चारे की फसलें, मोंठ इत्यादि) उगानी चाहिए। अधिक ढालू भूमि में पट्टियों में भी फसलें उगाई जा सकती है तथा इन पट्टियों में फसलों का क्रम बदला जाता है। उचित सस्य चक्र अपनाने से मृदा का संरक्षण होता है तथा भूमि की विभिन्न गहराइयों से नमी एवं पोषक तत्वों का उपयोग होता है।

सारणी 1. वर्षा पर आधारित खरीफ के प्रमुख चारा - फसलों की सस्य क्रियाएं

फसल	उन्नत प्रजातियाँ	भूमि	बुवाई का समय	बीज की दर किलो/हे.	दूरी पंक्ति से पंक्ति (से. मी.)	उर्वरक की मात्रा (किग्रा/हे.)		कटाई का समय (बुवाई के बाद दिनों में)	हरे चारे की उपज कु./हे.
						बोते समय	खड़ी फसल में		
बाजरा	राज बाजरा चरी-2 जायन्ट- बाजरा, ए.वी. के. बी. - 2	बुलई दोमट, दोमट	वर्षा आरम्भ	10-12	25	नत्रजन, 40 फास्फेट, 20	नत्रजन- 20 5 सप्ताह बाद	55-60	300-350
ज्वार (चरी)	एम. पी. चरी, पी. सी. -6 एच. सी. 136	दोमट, मटियार दोमट	वर्षा आरम्भ	30-40	25	नत्रजन, 40 फास्फेट, 20	नत्रजन- 20 6 सप्ताह बाद	60-75	300-400
मक्का	अफरीकन टाल, जे. 1006, विजय	दोमट, बुलई दोमट	वर्षा आरम्भ	55-60	30	नत्रजन, 50 फास्फेट, 25	नत्रजन- 25 5 सप्ताह बाद	70-75	300-350
लोबिया	एन पी -3 बुन्देल लोबिया, 1,2,3	दोमट, बुलई दोमट	वर्षा आरम्भ	40-45	30	नत्रजन, 20 फास्फेट, 50	-	60-70	250-300
ग्वार	एच एफ जी-119, बुन्देल ग्वार 1 एवं 2	बुलई दोमट, दोमट	वर्षा आरम्भ	35-40	30	नत्रजन, 15 फास्फेट, 30	-	60-70	200-250
बहुवर्षीय घास	पेनीसिटम त्रिसंकर घास	बुलई दोमट, दोमट	वर्षा आरम्भ	30000 - 40000 कल्ले	100 सेमी.	नत्रजन, 60 फास्फेट, 40	नत्रजन- 30 किग्रा प्रत्येक कटाई के बाद	प्रथम 70-75 तत्पश्चात 25-30 दिनों के अन्तराल पर	900-1200
जई	केन्ट, जे एच ओ 822, यू पी ओ 212	बुलई दोमट, दोमट	मध्य अक्टूबर	प्रथम कटाई 60-65 किग्रा द्वितीय कटाई 50:फूल आने पर एक कटाई 80-85 दिन बाद।	25	नत्रजन, 40 फास्फेट, 40	नत्रजन- 20 5 सप्ताह बाद	55-60	300-350
सिटैरिया	नन्दी	दोमट, मटियार दोमट	वर्षा आरम्भ	30000 - 40000 कल्ले	100 सेमी.	नत्रजन, 50 फास्फेट, 30	नत्रजन- 30 किग्रा प्रत्येक कटाई के बाद	प्रथम 70-75 तत्पश्चात 25-30 दिनों के अन्तराल पर	700-800

6. **खरपतवार नियंत्रण तथा अन्त: कर्षण :** निकाई तथा अन्त:कर्षण द्वारा खेत से अवांछनीय पौधों को समय-समय पर नष्ट करते रहने से भूमि में उपस्थित नमी एवं पोषक तत्वों का उपयोग केवल बोई गई फसल के पौधों द्वारा ही होता है इससे उनकी वृद्धि अच्छी होती है। अन्त:कर्षण द्वारा भूमि की ऊपरी सतह पर मिट्टी की एक अवरोध परत बन जाती है जो भूमि की भीतरी सतह से नमी के वाष्पीकरण को रोकती है। इसके उपरान्त वर्षा होने पर भूमि की जलग्रहण शक्ति बढ़ जाती है।

ऊपर बताई गई सस्य क्रियाओं को व्यवहार में लाने से फसलोत्पादन में सफलता मिलती है। ऐसे क्षेत्र जहां नमी की अनिश्चितता होती है, चारे की फसलें वृद्धिकाल कम होने तथा इच्छानुसार कटाई के समय में थोड़ा बहुत परिवर्तन कर देने के कारण अधिक सफल होती है। इन क्षेत्र के लिए उपयुक्त चारे की फसलों की सस्य क्रियाएं सारणी -1 में संक्षेप में दी जा रही है। ❑

भारतीय भाषाएं नदियाँ हैं और हिन्दी महानदी। हिन्दी देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती है। हमें इसे राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करनी ही चाहिए। मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि हिन्दी बिना हमारा काम चल नहीं सकता।

– रवीन्द्र नाथ ठाकुर

हे पृथ्वी! सभी प्राणी तुमसे ही उत्पन्न होकर तुम पर ही विचरण करते हैं। दोपाये और चौपाये सभी का तुम भरण पोषण करती हो। हे पृथ्वी! सभी जीव तुम्हारे ही बनाये हुए हैं। वे मरणशील हैं किन्तु प्रतिदिन उगा हुआ सूर्य अपनी रश्मियों से उन्हें अमृतत्व प्रदान करते हैं।

– (अथर्ववेद 12/1/15)

अंजन घास (सेनक्रस सिलिएरिस) का वैज्ञानिक विधि से चारा व बीज उत्पादन

दिवाकर बहुखण्डी, रामकृष्ण भट्ट, आर.के.सिंह

प्रकृति में घासों का उतना ही महत्व है, जितना कि मनुष्य के लिए उपयोगी अन्य पेड़ पौधों का। पशु पक्षी चाहे पालतु हों या जंगली, प्राथमिकता से घासों पर ही निर्भर करते हैं, क्योंकि घासों में उपयोगी पोषक तत्व व खनिज लवण प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। औषधीय गुणों के साथ-साथ घासें पारिस्थितिकी में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। अपनी झकड़ा जड़ों को धरती में फैलाकर ये मिट्टी के अपरदन को रोकती हैं व साथ ही धरती

अंजन घास में बीज उत्पादन

को एक निश्चित आकार भी देती हैं इसलिए इन घासों का उपयोग भूमि सौन्दर्यकरण (लैण्ड स्कैपिंग) में भी होता है। साधारणतया कम वर्षा होने के कारण व मानव द्वारा लगातार इसकी उपेक्षा करने से घासों का संरक्षण आवश्यक हो गया है।

स्थान एवं वर्गीकरण

अंजन घास को सामान्यता बफेल भी कहा जाता है। यह शुष्क एवं अर्द्धशुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में, भारत के लगभग सभी भागों में पाई जाती है, परन्तु पश्चिमी राजस्थान, पश्चिम आंध्र प्रदेश व उत्तर प्रदेश में बहुतायत से मिलती है व कहीं कहीं इसकी खेती भी की जाती है। 250 से 900 मि.मी. वर्षा वाले क्षेत्रों में यह अच्छी प्रकार उगती है। यह पुष्पधारी पौधों के एक बीज-पत्री समूह में घासकुल के अंतर्गत आता है। इसका वानस्पतिक नाम सेनक्रस सिलिएरिस है।

प्रजातियां

अंजन घास की मुख्य रूप से दो प्रजातियां पाई जाती हैं। सेनक्रस सिलिएरिस (बफेल) व सैनक्रस सैजिटैरस (बर्डवुड) या पीली अंजन घास। सेनक्रस सिलिएरिस की मुख्य प्रजातियां- बुन्देल अंजन या आई.जी.एफ.आर.आई-3108, मारवाड़ अंजन-काजरी 75, काजरी-357 व काजरी-358 हैं।

बुवाई का समय व खेत की तैयारी

उत्तर भारत में अंजन घास जून व जुलाई में लगायी जाती है, व दक्षिण भारत में मार्च से सितम्बर तक। यह घास हल्की दोमट, बलुई या बलुई दोमट मिट्टी में अच्छी पैदावार देती है। घास लगाने से पहले खेत की अच्छी प्रकार से जुताई की जाती है, ताकि मिट्टी भुरभुरी हो जाय।

बुवाई की विधि एवं बीजदर

बीज की बुवाई कर पौध तैयार की जाती है, जो कि 4-5 सप्ताह में रोपाई योग्य हो जाती है। पौध तैयार करने के लिए बीज की मात्रा 5-6 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर होती है। एक अन्य विधि द्वारा रोपाई करने के लिए एक-दो साल पुराने घास के पौधों की सहायक जड़ों को, जिनमें थोड़ा सा प्ररोह भी होता है, निकाल दिया जाता है व पौध की जगह इनकी रोपाई की जाती है। लगभग 20,000 जड़े एक हेक्टेयर के लिए पर्याप्त होती हैं। रोपाई खेत में पंक्तिबद्ध विधि से की जाती है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 75-100 सेमी. व पौधे से पौधे की दूरी 45-50 सेमी. रखी जाती है।

उर्वरक एवं देखभाल

पौधे लगाते समय 25-30 कि.ग्रा. नत्रजन, 30-35 कि.ग्रा. फास्फोरस व इतनी ही पोटास खाद प्रति हेक्टेयर दी जाती है। इसके अलावा प्रत्येक कटाई पर लगभग 20 कि.ग्रा. नत्रजन देना चाहिए। पौध या जड़े लगाते समय पानी देना अनिवार्य होता है व जरूरत पड़ने पर सिंचाई आवश्यक है। अंजन घास के खेतों की अन्य घास व चारा फसलों से कम से कम 20 मीटर की दूरी बनाए रखनी चाहिए। बुवाई से लेकर बीज बनने तक घास की देखभाल आवश्यक है।

खरपतवार एवं बीमारियों से रोकथाम

खपरतवार पर नियंत्रण के लिए ग्लाईफासेट 0.75-1.25 लीटर, ग्रैमक्जोन 1.0-1.25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर व दीमक के लिए 20 किलो ग्राम ऐल्ड्रिन धूल प्रति हेक्टेयर प्रयोग किया जाता है। नर्सरी लगाते समय प्रति किलो बीज को 3-4 ग्राम थीरम या फफूंद नाशक वेवस्टिन से उपचारित कर देना चाहिए।

फसल कटाई

पौधों के सामान्य विकसित होने की दशा में पहली कटाई पौधरोपण के 45-50 दिन बाद की जाती है। दूसरी कटाई पहली कटाई के 40 दिन बाद व तीसरी कटाई दूसरी कटाई के 40-45 दिन बाद। दो-तीन महीने में घास का पौधा पूर्ण रूप से एक बहुवर्षीय पौधे की तरह जमीन पर सुदृढ़ रूप से जड़ें जमा देता है। एक पूर्ण विकसित

पौधे की लम्बाई लगभग 5-6 फीट व मोटाई लगभग एक फीट होती है।

उत्पादन

पहले वर्ष में लगभग 150 से 350 कुंतल तक हरा चारा प्राप्त हो जाता है। बीजोत्पादन करने के लिए दूसरी कटाई के बाद घास को बीज बनने के लिए छोड़ देते हैं। परिपक्व होने पर बालियों को या सम्पूर्ण पौधे को काटकर बीज इकट्ठा कर दिया जाता है, सामान्य रूप से बीज 3 फसलों से लिया जाता है जिसमें बीज की मात्रा व जीवनक्षमता में भी अंतर रहता है। पहले वर्ष में बीज का उत्पादन 0.72 कुंतल होता है जब कि दूसरे वर्ष में सबसे अधिक 0.92 से 1.0 कुंतल तक होता है।

भंडारण

बीजों को अच्छी प्रकार साफ करके व धूप में सुखाकर टिन या प्लास्टिक डिब्बों अथवा मोटे पालीथीन थैलों में भंडारण कर देना चाहिए। भंडारण के समय बीजों में 10 प्रतिशत से अधिक नमी नहीं रहनी चाहिए तथा बीजों को कीटनाशक मैलाथियान व फफूंद नाशक वेवस्टिन से संशोधित कर लेना चाहिए।

❑

इतने बड़े देश में जहां इतनी भाषाएं हैं वहां देश की एकता के लिए एक कड़ी की आवश्यकता है। कोई भाषा ऐसी हो, जिसे सब बोल सकें, जो एक कड़ी की तरह सबको मिलाजुला कर रख सकें। इसलिए हिन्दी को बढ़ावा देना सबका काम है।

– श्रीमती इंदिरा गांधी

जैसे तिनका हवा का रूख बताता है वैसे ही मामूली घटनाएं भी मनुष्य के हृदय की वृत्ति को बताती हैं।

– महात्मा गांधी

खरीफ चारे को कहीं कीट न चट कर जाएं

एन. के. शाह एवं प्रदीप कुमार त्यागी

हमारे देश की लगभग 4.4 प्रतिशत कृषि भूमि पर विभिन्न प्रकार की चारा फसलों की खेती की जाती है। खाद्यान्न की लगातार बढ़ती मांग के कारण चारा क्षेत्र के और अधिक विस्तार की सम्भावनाएं नगण्य ही हैं। देश के पशुधन में प्रतिवर्ष वृद्धि एवं सीमित चारा क्षेत्र के कारण यह अत्यन्त आवश्यक है कि प्रति इकाई क्षेत्र व समय में अधिकाधिक चारा पैदा किया जाये। अत: इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु उन्नत किस्मों का चयन एवं विभिन्न सस्य क्रियाओं तथा फसल संरक्षण तकनीकी को अमल में लाया जाए।

प्रस्तुत आलेख में खरीफ में उगायी जाने वाली प्रमुख चारे की फसलों में लगने वाले मुख्य कीट उनके लक्षण तथा नियंत्रण की संक्षिप्त जानकारी समाहित की गई है। सुझायी गयी कीट नियंत्रण की जानकारी द्वारा किसान भाई अपनी चारा फसलों को कीटों के प्रकोप से न केवल मुक्त रख पायेंगे बल्कि प्रति हेक्टेयर अधिकाधिक चारा उत्पादित कर सकेंगे। उपर्युक्त जानकारी को सुविधा जनक रूप में प्रस्तुत करने हेतु सारणीबद्ध किया गया है।

विभिन्न कीटों के नियंत्रण हेतु किसान भाई सुझायी गयी दवाओं/रसायनों का प्रयोग करने से पूर्व यह सुनिश्चित करले कि कहीं उनका चारा दो-चार दिन पश्चात् कटने योग्य तो नहीं है यदि ऐसा है तो रसायन का छिड़काव न करें अत: यह बहुत महत्वपूर्ण है कि दवा छिड़कने के 10-15 दिनों बाद ही चारे की कटाई की जाए।

साथ ही साथ एक अन्य ध्यान देने योग्य बात यह है कि खेती खरपतवार मुक्त हो। क्योंकि बहुत से खरपतवार नाशक कीटों के एकान्तर परपोषी होते हैं। अत: इनकी उपस्थिति से खेती में कीटों की बहुतायत होगी, अब निराई-गुड़ाई के समय इन खरपतवारों का निदान आवश्यक है। एकान्तर परपोषी पौधों से खेती को मुक्त रखने से कीटोंकी संख्या में बहुत बड़ी कमी आ जाती है। लिहाजा स्वच्छ खेती करने से कीटों का प्रकोप भी कम रहता है।

सारणी 1. प्रमुख चारा फसलों (खरीफ) के मुख्य कीट एवं लक्षण तथा निदान।

फसल	कीट	लक्षण	निदान
ज्वार	प्ररोह मक्खी (शूटफ्लाई)	पौधे की प्रारम्भिक अवस्था में इसका प्रकोप होता है। इस मक्खी का शिशु (मेगट) पौधे को अन्दर से काट डालता है। इस कीट से ग्रसित खेतों में मृत-गोभ (डेड हर्टस) दिखाई पड़ते हैं। देरी से बोयी फसल में इसका भंयकर प्रकोप पाया जाता है।	3 प्रतिशत कार्बोफयूरॉन (3जी) या 10 प्रतिशत फोरेट से बीजोपचार करें। मोनोक्रोटोफॉस (35 सीसी) को 400 मिली/हे. से छिड़काव करें।
	तना छेदक (स्टेम बोरर)	इस कीट की इल्लियां तने के अंदर ही अंदर उसे खाती रहती हैं जिससे पौधे का गोभ सूख जाता है। इल्ली (केटर पिलर) तने को नुकसान कर मृत गोभ (डेड-हर्टस) बनाता है।	400 मिली मोनोक्रोटोफॉस (35 सीसी) को 400 ली.पानी में घोलकर प्रति हे. छिड़काव करें। या 600 मिली एण्डोसल्फान (35 ईसी) को 400 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
	टिड्डा	इससे पौधों की वनस्पतिक एवं बाली दोनों अवस्थाओं में हानि होती है। देरी से बोयी फसल में अधिक प्रकोप पाया जाता है। शिशु एवं वयस्क पत्तियों के किनारे से अंदर की ओर चट कर जाते है। तीव्र प्रकोप होने पर पत्तियों का मध्य शिरा ही बचा रहता हे। अगस्त माह में बहुत प्रकोप होता है।	600 मिली एण्डोसल्फान (35ईसी) को 400 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।
बाजरा	प्ररोह मक्खी	ज्वार की तरह	ज्वार की तरह
मक्का	तना छेदक	ज्वार की तरह	ज्वार की तरह

(शेष पृष्ठ 18 पर)

(सारणी 1. का शेष)

फसल	कीट	लक्षण	निदान
मक्का	एफिड	यह कीट पत्तियों से रस चूसते हैं। कोमल तनों एवं पत्तों में प्रकोप बहुत होता है।	डायमेथोएट(30 ईसी) 0.04 प्रतिशत का छिड़काव करें। या एण्डोसल्फान(35 ईसी) का छिड़काव इसी दर से करें
	पर्ण लपेटक (लीफ रोलर)	इस कीट की इल्लियां पत्तियों के उपरी सिरे को मोड़कर चिपका देता है। अंदर घुसकर पत्ती खरोंच कर खा जाती है। इस कीट द्वारा जुलाई के द्वितीय पखवाड़े से सितम्बर के प्रथम पखवाड़े तक तीव्र प्रकोप होता है।	400 मिली मेलाथियान(35 ईसी) को 400 ली. पानी में घोलकर छिड़काव करें।
	टिड्डा	ज्वार की तरह	ज्वार की तरह
लोबिया	फली भृंग	इस कीट का वयस्क पत्तियों को खाते हैं और उनमें गोलाकार छेद कर देते हैं। जुलाई-अगस्त में तीव्र प्रकोप होता है।	एण्डोसल्फान (35 ईसी) 600 मिली को 400 ली.पानी में घोलकर छिड़काव करें।
	सेमीलूपर	इस कीट की इल्लियां पत्तियों को एक छोर से खाना शुरू करती हैं तथा प्रकोप बढ़ने पर पूरी पत्ती चट कर जाती हैं। अगस्त माह में तीव्र प्रकोप पाया जाता है।	1.5 मिली मेलाथियान (35 ईसी) को प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
	मांहू (एफिड)	यह कीट झुण्डों में पौधों पर चिपका रहता है। कोमल पत्तियों एवं फलियों का रस चूसते हैं।	एण्डोसल्फान 35 ई.सी. का 0.80 ली./हे. का छिड़काव करें।
	फुदकें	शिशु (निम्फ) एवं व्यस्क, पौधों का रस चूसकर हानि पहुंचाते हैं। अगस्त माह में तीव्र प्रकोप होता है।	400 मिली मोनोक्रोटोफास (35 ईसी) को 400 ली. पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

जो शत्रु तुम पर आक्रमण करते हैं, उनसे तुम मत डरो, उन मित्रों से डरो जो तुम्हारी चापलूसी करते हैं।

– जनरल ओब्रगोन

पौधों की जड़ों से संलग्न लाभप्रद मूलकवक–वेम

एन. हसन, आर.बी.भास्कर एवं पी.के.त्यागी

पेड़ पोधों की जड़ों से प्राय: संलग्न मूलकवक अथवा वेम (वेसिक्यूलर आरबसक्यूलर माइकोराईजा) एक प्रकार की फफूंदी होती है जो जड़ों के साथ सहजीविता करते हुए सहिष्णुता बनाये रखती है। वे पौधों से शर्करा प्राप्त करती है तथा बदले में पौधों को आवश्यक पोषक तत्व मुख्यत: फास्फोरस तथा जिंक उपलब्ध कराती है। ज्यादातर फसलों एवं पेड़ों (लगभग 80 प्रतिशत) की जड़ों में यह फफूंदी अभिन्न अंग या साधारण रूप से पायी जाती है। अन्य फफूंदियों की तरह वेम भी मृदा कणों को बांधे रखती हैं।

वेम कैसे रहती है

विभिन्न प्रकार की मृदा, वानस्पतिक संरचना तथा वातावरण के आधार पर वेम की लगभग 150 प्रजातियां है। लेकिन साधारणतया ये सभी सुग्राही पौधों की जड़ों से उपनिवेश करने की क्षमता रखती है। जो इनके प्रबंधन में महत्वपूर्ण कारक होता है। हमारे देश मैं चारा फसलों से संलग्न वेम की कुछ प्रमुख प्रजातियों को सारणी –1 एवं चित्र 1–2 में दर्शाया है।

सारणी 1. चारा फसलों से संलग्न वेम की कुछ प्रमुख प्रजातियां।

(क)	1.	ग्लोमस फेसीकुलेटम
	2.	ग्लोमस मौजी
	3.	ग्लोमस मेकरोकारपम
	4.	ग्लोमस एग्रीगेटम
(ख)	1.	जीगास्पोरा मारगेरीटा
	2.	जीगास्पोरा जाइगैन्टिया
(ग)	1.	अकालोस्पोरा लेविस
(घ)	1.	एक्सेलेरोसिस्टिस कोरिमिओइडिस

क्या हम मृदा या जड़ों में वेम को देख सकते हैं

वेम को सिर्फ सूक्ष्मदर्शी द्वारा ही देखा जा सकता है। नग्न आंखो से देख पाना असंभव है।

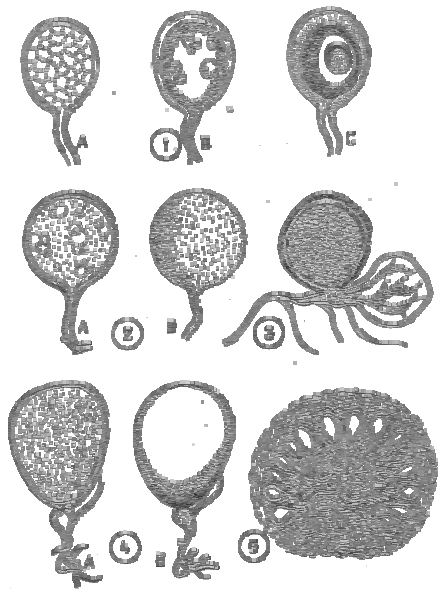

प्रमुख वेम प्रजातियों के बीजाणु

1. (A से C)– ग्लोमस फेसीकुलेटम
2. (A से B) – ग्लोमस मौजी
3. – अकालोस्पोरा लेविस
4. (A से B) – जीगास्पोरा केलोस्पोरा
5. – एक्सेलेरोसिस्टिस थेरिमोसिस

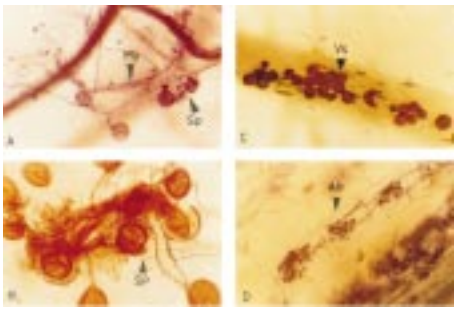

लोबिया की जड़ों से संलग्न वेम (ग्लोमस फेसीकुलेटम)

A बाहरी माइसिलियम B परिपक्व बीजाणु C भीतरी माइसिलियम एवं वेसिकल C कोशिका में अरबसक्यूलस

वेम से किसी प्रकार की व्याधि नहीं होती है। अत: इसके प्रभाव से जड़ों में रंगहीनता या क्षय नहीं होता है। इससे यह पता करना मुश्किल होता है कि ये जड़ों में है या मृदा में। वेम पौधों में आवश्यक पोशक तत्वों को प्रदान करने के साथ–साथ मृदा के स्थायित्व में सहायक होती है। वेम की कमी से पौधों की वृद्धि घट जाती है।

स्टाइलो पौध : वेम टीका रहित (बाएं) एवं टीकाकृत (दाएं)

वेम पौध संबंध

पौधों की जड़ वृद्धि में वेम सहायक सिद्ध होती है तथा मृदा से पोशक तत्वों को पौधे की अपेक्षा अधिक प्रभावी तरीके से प्राप्त करती है। कुछ पोषक तत्व जैसे– फास्फोरस तथा जिंक मृदा में बहुत धीरे धीरे गमन करते है। अत: वेम की उपस्थिति से इन पोषक तत्वों का अवशोषण बढ़ जाता है।

मृदा में यह फफूंदी जड़ों से काफी दूर तक वृद्धि करती है तथा दूरस्थ उपलब्ध पोषक तत्वों को प्राप्त कर पोधों को पुन: त्वरित गति से प्रदान कर देती है। इस तरह सूखी मृदा में तीव्र परिवहन प्रणाली धीमी गति से तत्वों के परिवहन पर प्रभावी हो जाती है। यह फफूंद पानी भी परिवहन करती है परन्तु इस दिशा में और अधिक जानकारी के लिए अभी और अधिक शोध कार्यों की आवश्यकता है।

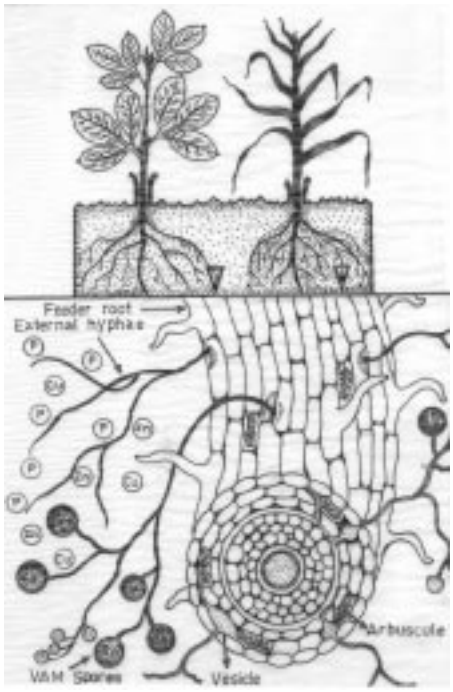

पौध वेम सहजीविता : मुख्य संरचना एवं पोषक तत्व ग्रहण प्रक्रिया

वेम की आधारभूत संरचना

इस फफूंद की मूलभूत इकाई (माईसीलियम) बहुत ही पतली होती है। (एक मीटर का 10 मिलियन्थ या इससे भी कम) इससे पता चलता है कि इनमें पोषक तत्वों के अवशोषण के लिए पर्याप्त सतह होती है जो मृदा कणों के मध्य से तत्वों को अवशोषित कर लेती है। जिसे पौधों की जड़ें नहीं कर पाती जो कि वेम की मोटाई की 10 गुना होती है। जड़ों से बाहर वृद्धि करने वाली वेम फफूंदी मृदा के कणों को बांधने का कार्य करती है। इससे मृदा का स्थायित्व बढ़ता है तथा मृदा का क्षरण नहीं हो पाता। यह लाभप्रद सहजीविता एक पक्षीय नहीं होती है क्योंकि बदले में फफूंदी पौधों से शर्करा प्राप्त करती है। ज्यादातर पौधे शर्करा मुक्त करते हैं अत: फफूंदी के सहयोग की कीमत की प्रतिपूर्ति हो जाती है। इसके परिणामस्वरूप मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों का सवंहन बढ़ जाता है। फलस्वरूप पौध वृद्धि और फसल उत्पादन अधिक हो जाता है। सारणी -2

सारणी 2. वेम टीकाकृत कुछ चारा फसलों के उत्पादन में वृद्धि

फसल	वेम प्रजातियां	उत्पादन वृद्धि (:)
लोबिया	ग्लोमस मौजी	75
रिजका	विभिन्न प्रजातियां	> 100
बरसीम	ग्लोमस मौजी	35
स्टाइलो	ग्लोमस फेसीकुलेटम	25
मक्का	ग्लोमस मौजी	> 100
बाजरा	ग्लोमस मौजी	35
अंजन घास	ग्लोमस फेसीकुलेटम	45
सुबबूल	ग्लोमस प्रजातियां	45-96
अल्बीजिया	ग्लोमस मौजी	56

क्या सभी पौधों में वेम फफूंदी होती है

लगभग 80 प्रतिशत प्रमुख पौध प्रजातियों में वेम फफूंदी पायी जाती है। कुछ प्रमुख पौधों में जिनमें वेम वृद्धि नहीं करती है उनमें केनोला, केबेज,सरसों, ल्यूपिन्स तथा बीट है। फसलों की अन्य प्रजातियों जिनमें वेम पाया जाता है को सहभागिता स्तर के आधार पर श्रेणीबद्ध किया जा सकता है। प्राय: यह जड़ वृद्धि तथा जड़ों में मूलरोमों की वृद्धि एवं मृदा परिस्थिति मुख्यत: पोषक तत्वों के स्तर पर निर्भर करता है। कौन सी फसल वेम की किस प्रजाति के प्रति कितनी क्रियाशीलता दिखाती है के आधार पर ही फसल उत्पादन में बढ़ोतरी का सही आकलन करने में सहायता मिल सकती है मुख्यत: उस मृदा में जिसमें पोषक तत्वों की कमी होती है। उच्च अनुक्रियाशील फसलों के बाद कम या सहभागिता नहीं करने वाली फसलों को नहीं उगाना चाहिए। पौधे के साथ अनुक्रियाशील फफूंदी की जानकारी न होने पर यह पता करना मुश्किल है कि उनमें वेम की वृद्धि नहीं पायी जाती। वेम प्राय: सभी अनुक्रियाशील पौधे के साथ वृद्धि करती रहती है जो फसल चक्र में प्रभावी होती है।

मृदा अवस्था से वेम कैसे प्रभावित होती है

वृद्धि एवं प्रजनन के लिए वेम फफूंदी को जीवित पौधे की आवश्यकता होती है जो मेजबान होते हैं। हालांकि सभी परिस्थितियों में चाहे गर्म हो या आर्द्र या मृदा अवस्था कैसी है ये फफूंदी बीजाणुओं के रूप में गुप्तावस्था में रहकर जीवित बनी रहती है। यह मृदा के विभिन्न पीएच अवस्थाओं तथा मृदा प्रकार जैसे-दोमट से चिकनी मिट्टी तक में बनी रहती है। स्थानीय परिस्थितियों में भी इन फफूंदियों की कुछ प्रजातियां उपलब्ध रहती है। गर्म परिस्थितियों में इनके बीजाणु तथा प्रभावित जड़े अच्छी प्रकार से जीवंत बने रह सकते है। नम परिस्थितियों में इनके बीजाणु सक्रिय हो जाते हैं लेकिन मेजबान पौधे की अनुपस्थिति में यह मर जाते हैं। फसल के न लगने पर इनकी वृद्धि घट जाती है लेकिन पूर्ण रूप से इनका उपनिवेश खत्म नहीं हो जाता। फसल लगाने पर इनकी वृद्धि हो जाती है।

वेम फफूंद मृदा में उपस्थित कार्बनिक पदार्थों का उपयोग खाद्य के रूप में नहीं करते हैं। विभिन्न प्रजातियां सभी प्रकार के मेजबान पौधों से संबंध रखती है। बदले में पौधे फफूंदी को शर्करा प्राप्त कराते है। तथा उनकी जनसंख्या को बनाये रखते हैं। लम्बे समय तक बंजर भूमि रहने पर (मुख्यत: जब मृदा में नमी न रहे) या मेजबान पौधे की अनुपस्थिति से वेम फफूंदी की संख्या घट जाती है। ऐसा इसलिए की जब गर्म एवं आर्द्र मृदा में पौधे की अनुपस्थिति में बीजाणु अंकुरित हो जाता है लेकिन पौधे के अभाव में वृद्धि नहीं कर पाते एवं नष्ट हो जाते हैं। फसल जैसे सरसों वेम की जनसंख्या को घटाते हैं तथा आने वाली फसलों की जड़ों में इनकी संख्या को कम कर देते हैं। हालांकि एक वर्ष होने पर सरसों से उतना प्रभाव नहीं पड़ता। लगातार कई वर्षों तक बोने से यह वेम की वृद्धि को कम कर देते हैं। पारंम्परिक जोत तथा अन्य मृदा प्रभावों के कारण वेम पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इससे फफूंदी के रेशे टूट जाते हैं एवं पौधे से संबंध खत्म हो जाता है जिससे वे पोषक तत्वों के संचरण को ठीक प्रकार नहीं कर पाते।

मृदा सघनता से जड़ों की वृद्धि प्रभावित होती है तथा वेम से मिलने वाले लाभ भी प्रभावित होते हैं। इस दिशा में कार्य किया जा रहा है कि वेम किस तरह इस मृदा में वृद्धि करती है या अन्य कोई फफूंदी ज्यादा प्रभावकारी हो सकती है। उच्च खाद मात्रा मुख्यत: फास्फोरस से वेम फफूंदी की वृद्धि प्रभावित होती है। यह प्रभाव पौधे की वेम के प्रति सहसंबद्धता पर निर्भर करती है। गेहूं में खाद की अधिक मात्रा से वेम पर प्रभाव पड़ता है लेकिन दलहनीय चारों पर इनकी सहायक वेम फफूंदी पर कम प्रभाव पड़ता है।

कुछ कीटनाशी जो मृदा में अवशोशित हो जाते

सारणी 3. प्रमुख चारा फसलों में 'अपेक्षित मूलकवक निर्भरता (रिलेटिव माइकोराइग्जल डिपेन्डेन्सी) एवं मूल उपनिवेश प्रतिशत (: रूट कालोनाइजेशन)

चारा फसल	अपेक्षित मूलकवक निर्भरता	: मूल उपनिवेश
मक्का	140.6	72
बाजरा	132.5	65
ज्वार	110.0	55
गिनी घास	145.0	80
अंजन घास	152.0	81
फुल्कारा घास	95.6	62
मार्वल घास	85.0	38
सेहिमा घास	80.5	33
नेपियर घास	110.5	68
बरसीम	126.7	85
रिजका	110.5	78
लोबिया	115.0	65

$$\text{अपेक्षित मूलकवक निर्भरता} = \frac{\text{मूलकवक टीकाकृत शुष्क पौध भार}}{\text{मूलकवक रहित शुष्क पौध भार}} \times 100$$

है का वेम पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। ज्यादातर पौधनाशियों का वेम पर सीधे प्रभाव नहीं पड़ता है लेकिन यह पौधों को नष्ट कर देते हैं तथा वेम को मिलने वाले खाद्य पदार्थ में कमी हो जाती है। मृदा के धूमीकरण से मृदा में पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवियों के साथ वेम भी नष्ट हो जाती है। बचे हुए पौध अवशेषों से मृदा को पोषक तत्व प्राप्त होते हैं तथा फफूंद इसे सीधे पौधों को प्राप्त करा देते है। इन पौध अवशेषों को जला देने पर वेम फफूंदी नष्ट हो जाती है। कार्बनिक प्रबंधन से पौधों की जड़ों में वेम की संख्या बढ़ जाती है।

वेम मृदा में अन्य जीवियों से पोषक तत्वों के लिये प्रतिस्पर्धा करती है। इससे पौधों की प्रतिस्पर्धा योग्यता भी बढ़ जाती है। यह दलहनीय पौधों की जड़ों पर नोड्यूल द्वारा नत्रजन योगीकरण में फास्फोरस की मात्रा अधिक ग्रहण कर फसल पैदावार बढ़ा देती है। यह सूत्रकृमियों एवं फफूंदियों से होने वाली व्याधियों के प्रति पौधे में सहनशीलता बढ़ा देती है। मृदा में कुछ जीव वेम को खाते हैं जब तक कि इन जीवों की मात्रा अधिक न हो इनसे वेम की बढ़ोतरी में सहायता मिलती है। मृदा में वेम की संख्या बढ़ाने में सहायक कुछ महत्वपूर्ण चारा फसलों में मक्का, बाजरा, ज्वार, अंजन, रहोड, बहिया गिनी घास एवं बरसीम, रिजका, लोबिया प्रमुख पाई गई है। सारणी-3

मृदा में वेम की मात्रा बनाए रखने एवं इस बढ़ाने के उपाय

1. चक्रवार फसलों में वेम की भूमिका को परखें। फसल मेजबान है या नहीं, सहभागिता करती है या नहीं, क्या इससे मृदा में संख्या बढ़ेगी।
2. चक्र में मेजबान फसलों को उगाएं मुख्यत: जब दूसरी फसल उगायी गई हो जिससे वेम की संख्या ठीक प्रकार बनी रहे।
3. वेम से संबंध रखने वाली फसल से पूर्व संबंध न रखने वाली फसलों को न उगायें।
4. आवश्यक जोत ही करें जिससे वेम फफूंदी नष्ट न हो।
5. केनोला या सरसों जैसी फसलों को एक से अधिक वर्षों तक न उगाएं।
6. मेजबान न करने वाली फसलों के तुरन्त बाद वेम से सहभागिता करने वाली फसल उगानी चाहिए।
7. पारम्परिक जोत करें ऐसी परिस्थितियों को छोड़कर जहां व्याधियों को कम करना जरूरी हो।
8. आवश्यक होने पर ही फसल अवशेषों को जलाएं।
9. खेतों में वेम की वृद्धि एवं इसे अधिक समय तक टिके रहने के लिए कम से कम रासायनिक खादों तथा कीटनाशियों का प्रयोग करें एवं कार्वनिक कृषि पद्धति को चारा फसल उत्पादन हेतु बढ़ावा देने का प्रयास करें।

❑

कभी मत सोचना कि मैं किस पद पर काम कर रहा हूं, सोचना यह कि प्राय: जिस आसन पर बैठे हैं उसके प्रति आपकी संपूर्ण निष्ठा होनी चाहिए कि हम क्या कर रहें हैं? यह महत्वपूर्ण है कि हम अपने कार्य को कितनी निष्ठापूर्वक करते हैं।

– श्रीमद् भगवद्गीता

भदावरी भैंस – घी का भण्डार

बद्री प्रसाद कुशवाहा

भदावरी भैंस

भदावरी अपने देश में पायी जाने वाली भैंसो की एक महत्वपूर्ण नस्ल है, जो दूध में अधिक वसा प्रतिशत के लिये विश्वविख्यात है। भदावरी भैंस के दूध में 7 से 14 प्रतिशत तक वसा की मात्रा पायी जाती है, और इसी गुण के कारण भदावरी भैंस का दूध घी बनाने के लिए सबसे उपयुक्त माना जाता है। गावों में प्राय: गाय का दूध पीने के लिए तथा भैंस का दूध (वसा प्रतिशत अधिक होने की वजह से) घी बनाने में प्रयोग किया जाता है। भारतीय दुग्ध व्यवसाय में घी का स्थान सर्वोपरि है तथा उत्पादित दूध की सर्वाधिक मात्रा घी में परिवर्तित की जाती है।

भदावरी भैंस का दुग्ध संगठन

भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान में सन् 2001 से भदावरी भैंस संरक्षण एवं संवर्धन परियोजना का संचालन किया जा रहा है। इस परियोजना के अंतर्गत भदावरी भैंस के विभिन्न पहलुओं जैसे उनकी भोजन की आवश्यकता, स्वास्थ्य एवं बीमारियां, प्रजनन, दुग्ध उत्पादन एवं दुग्ध संगठन, आदि का विस्तृत अध्ययन किया जा रहा है। दुग्ध संगठन (मिल्क कम्पोजीशन) के अध्ययन के लिये दूध देने वाली भैंसों के दूध का प्रत्येक 15 दिन के अंतराल पर, विश्लेषण किया जाता है। भदावरी भैंस के दूध का औसत संगठन तालिका नं. 1 में दिया गया है, तथा भदावरी

सारणी 1. भदावरी भैंस का दुग्ध संगठन

दुग्ध अवयव	मात्रा
वसा	8 प्रतिशत
वसा रहित ठोस पदार्थ	11.23 प्रतिशत
कुल ठोस पदार्थ	19.33प्रतिशत
प्रोटीन	4.11 प्रतिशत
कैल्सियन	205.72 मि.ग्रा./ 100 मि.ली.
जिंक	3.82 माइक्रोग्राम/ मि.ली.
कापर	0.24 माइक्रोग्राम/ मि.ली.
मैंगनीज	0.117 माइक्रोग्राम/ मि.ली.
फास्फोरस	140.90 मि.ग्रा./ 100 मि.ली.

भैंस के दूध की वसा प्रतिशत का भैंस की अन्य नस्लों के साथ तुलनात्मक विवरण तालिका नं. 2 में दिया गया है।

सारणी 2. भैंस की मुख्य नस्लों के दूध में वसा प्रतिशत

नस्ल	गृह प्रदेश	दूध में वसा प्रतिशत
भदावरी	उ.प्र./म.प्र.	8.00
मुर्रा	हरियाणा	6.65
नीली रानी	पंजाब	6.8
जाफरावादी	गुजरात	7.6
मेहसाना	गुजरात	7.0
पंढरपुरी	महाराष्ट्र	7.0
स्वाम्प	आसाम	6.0

सारणी 2 से यह स्पष्ट है भदावरी भैंस में अन्य नस्लों की तुलना में वसा का प्रतिशत सर्वाधिक है। भदावरी भैंस के गृह क्षेत्र में कहा जाता है कि भदावरी भैंस के 8 दिन के दूध से एक दिन की दूध की मात्रा के बराबर घी निकलता है। इस प्रकार से अगर एक हफ्ते में उत्पादित घी की मात्रा को प्रतिशत में बदला जाए तो वह लगभग11–12 प्रतिशत बैठता है। दूध में वसा प्रतिशत अधिक होने के अतिरिक्त भदावरी भैंस के दूध का जो स्वाद (मीठापन) है वह अन्य किसी भी नस्ल की भैंस के दूध से अच्छा है। भदावरी भैंसों के दूध को बिना चीनी के भी पिया जा सकता है।

भदावरी भैंस का सुन्दर बछड़ा

भदावरी भैंस की पहचान एवं विशेषताएं

इस नस्ल के पशुओं को गावों में भदावरी, भूरी, जनेऊवाली तथा सुअरगोड़ी आदि नामों से जाना जाता है। भदावरी भैंसों का आकार मध्यम, रंग तांबिया तथा शरीर पर बाल कम होते हैं। टांगें छोटी तथा मजबूत होती, चारो टांगों के घुटने से नीचे का हिस्सा हल्के पीले सफेद रंग का होता है, सिर के अगले हिस्से पर आंखों के ऊपर का हिस्सा सफेदी लिये हुये होता है। गर्दन के निचले भाग पर 2 सफेद धारियां होती है जिन्हें कंठमाला या जनेऊ कहते हैं। अयन तथा इसके पास की त्वचा का रंग हल्का गुलाबी होता है। सींग तलवार के आकार के होते हैं। इस नस्ल के पशु कठिन परिस्थितियों में रहने की क्षमता रखते है तथा अति गर्म एवं आद्र जलवायु में भी आराम से रह सकते हैं। इनकी खाद्य परिवर्तन क्षमता अधिक है। इस नस्ल की भैंसों को दूरस्थ क्षेत्रों में जहां आवागमन के साधन कम हैं तथा दूध को संरक्षित करने की सुविधायें नहीं हैं, आराम से पाला जा

सकता है। गांव में दूध बेचने की सुविधा न होने पर घी निकालकर सुविधानुसार महीने में एक या दो बार शहर जाकर बेचा जा सकता है। घी एक ऐसा उत्पाद है जिसको बिना खराब हुये वर्षों तक रखा जा सकता है। आज जब शुद्ध देशी घी के दाम आसमान छू रहे हैं तब किसान भाई घी बेचकर अच्छा लाभ कमा सकते हैं।

आहार में लीन भदावरी भैंस

प्राप्ति स्थल

भैंस की यह नस्ल चूंकि भदावर क्षेत्र में पायी जाती है इसीलिये इसका नाम भदावरी पड़ा। वर्तमान में इस नस्ल की भैंसे आगरा की वाह तहसील, भिण्ड जिले की भिण्ड तथा अटेर तहसील, इटावा जिले की बढ़पुरा, चकरनगर, औरैया तथा चम्बल नदी के आस-पास के क्षेत्रों में पायी जाती है। वर्तमान में भदावरी भैंसों की संख्या घट रही है इसका मुख्य कारण क्षेत्र में भदावरी नस्ल के साड़ों का अभाव तथा कृषकों का मुर्रा तथा संकर मुर्रा नस्लों की तरफ झुकाव है। भदावरी भैंसों की संख्या में निरंतर गिरावट चिंता का विषय है अगर इस नस्ल की भैंसों की संख्या में लगातार गिरावट होती रही तो कुछ वर्षों बाद भदावरी नस्ल के पशुओं का मिलना मुश्किल हो जायेगा।

भदावरी भैंस संरक्षण एवं सुधार के लिये भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान में परियोजना चलाई जा रही है। इस परियोजना के अंतर्गत भदावरी नस्लों के सांड तथा उनका हिमीकृत वीर्य प्रजनन हेतु कृषकों को उपलब्ध कराया जा रहा है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है मध्ययम एवं छोटे किसानों के लिये भदावरी एक सर्वथा उपयुक्त नस्ल है, इसको कम संसाधनों में पाला जा सकता है। तथा ग्रामीण आबादी के भूमिहीन या कम भूमि वाले गरीब किसान, जिन्हें दूध कम मात्रा में या बिल्कुल उपलब्ध नहीं हो पाता के घी बनने के पश्चात् बचे छाछ, लस्सी या मट्ठा आदि को प्रयोग कर अपने भोजन को संतुलित कर सकते है तथा घी बेचकर अपने दैनिक खर्चों को पूरा कर सकते हैं। ❑

मानव हृदय में घृणा, लोभ और द्वेष वह विषैली घास है, जो प्रेम रूपी पौधे को नष्ट कर देती है।

– सत्य साईं बाबा

यदि मनुष्य पाप कर भी ले तो उसे पुनः न दोहराए, न उसे छुपाए और न उसमें रत हो, पाप का संचय ही सब दुखों का मूल है।

– गौतम बुद्ध

भेड़-बकरियों मे खनिज लवणों की महत्ता

सनत कुमार महन्ता, श्वेता सिंह और शिखा अग्रवाल

भेड़-बकरियों के रखरखाव व उनकी विभिन्न उत्पादन प्रक्रियाओं के संचालन में खनिज लवणों का महत्वपूर्ण स्थान है। प्राचीन काल में केवल मानव के आहार में खनिज लवणों को जरूरी माना जाता था लेकिन आजकल पशु आहार में भी खनिज लवणों की आवश्यकता का महत्वपूर्ण स्थान है। पशुओं में खनिज तत्वों की आवश्यकता के निर्धारण की दिशा मे बहुत सीमित उपापचय सम्बंधी अध्ययन हुआ है। शुरूआत में केवल कुछ ही खनिज लवणों को रोमन्थी पशुओं में आवश्यक माना जाता था जैसे कैल्सियम, सोडियम, ताँबा, लोहा और आयोडीन। परन्तु दिन प्रतिदिन शोध में आये सुधार और नई-नई तकनीकों के आने से नई खोज होने लगी और यह देखा गया की पशुओं के शरीर में विभिन्न प्रकार की जैविक क्रियाओं में खनिजों का महत्वपूर्ण योगदान है। भेड़-बकरियों मे किसी भी खनिज तत्व की आहार में कमी या अधिकता से सामान्य उपापचय तथा निष्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। पूर्व में पशु आहार में केवल नमक को ही महत्व दिया जाता था परन्तु आजकल अन्य खनिजों को भी पशु आहार में सम्मिलित कर लिया है। भेड़-बकरियों की पाचन क्षमता और पानी पीने की रूचि को बढ़ाने के लिये वयस्कों को 10 ग्रा. तथा बच्चों को 5 ग्रा. नमक रोज खिलाना चाहिए। भेड़-बकरियों का भोजन अधिकतर हरे पेड़ की पत्तियों और हरे चारे पर आधारित होता है जिससे उन्हें प्रचुर मात्रा में कैल्सियम प्राप्त हो जाता है परन्तु किसानों को भेड़-बकरियों के आहार में फास्फोरस का समावेश पर्याप्त मात्रा में करना चाहिए। पशुओं के आहार में 0.14 से 0.70 प्रतिशत कैल्सियम और 0.10 से 0.39 प्रतिशत फास्फोरस का होना आवश्यक होता है (तालिका नं. 1)। आवश्यकता के अनुसार भेड़-बकरियों तथा अन्य साथी पशुओं के लिये खनिजों को 2 भागों में बॉटा गया है: वृहद तथा सूक्ष्म, वे खनिज तत्व जो भेड़-बकरियों के आहार में अधिक मात्रा में आवश्यक होते हैं उन्हें वृहद खनिज कहते हैं जैसे- कैल्सियम, फास्फोरस, मैग्नीशियम, सोडियम, पोटैशियम, गंधक व क्लोरीन। वे खनिज तत्व जो कम मात्रा में आवश्यक होते हैं उन्हें सूक्ष्म, खनिज कहते हैं जैसे ताँबा, लोहा, कोबाल्ट, जस्ता,आयोडीन, मैग्नीज, सेलेनियम, फ्लोरीन व मोलिब्डेनम।

सारणी 1. भेड़-बकरियों के लिये खनिज तत्वों की दैनिक आवश्यकताएं

वृहद खनिज तत्व (%)	
कैल्सियम	0.14-0.70
फास्फोरस	0.10-0.39
मैग्नीशियम	0.04-0.14
पोटैशियम	0.30-0.80
सोडियम	0.10-0.17
गंधक	0.11-0.22
सूक्ष्म खनिज तत्व (पीपीएम/मी.ग्रा.प्रति किलो)	
मैग्नीज	13-50
जिंक	10-50
आयरन	20-50
काँपर	5-14
कोबाल्ट	0.07-0.15
सेलेनियम	0.1-0.25
आयोडीन	0.11-0.60

भेड़-बकरियों के शरीर में खनिज तत्वों का कार्य

- खनिज तत्वों के कारण पशुओं के रोमन्थ मे उपस्थित सूक्ष्मजीवों की कार्यक्षमता और कार्य कुशलता बढ़ती है।
- शरीर रचना में खनिज तत्व मुख्य भूमिका निभाते हैं।
- खनिज तत्व शरीर मे अम्ल-क्षार सन्तुलन बनाये रखते हैं।
- खनिज तत्व प्रोटीन के महत्वपूर्ण अंग होते हैं जोकि शरीर रचना में मुख्य हैं।
- खनिज तत्व हार्मोन में भी विद्यमान होते हैं।
- यह मांस पेशियों की संकुचन क्रिया में भाग लेते हैं।
- खनिज तत्व दाँतों व हड्डियों का प्रमुख भाग होते हैं।
- यह कोशिका के परासरण दाब को नियंत्रित करते हैं।

खनिज लवण उचित मात्रा में दिया जाना चाहिए, खनिज लवणों की अधिकता व कमी से निम्नलिखित लक्षण दिखाई देते हैं (तालिका नं. 2)

आहार में खनिजों का प्रबन्ध

सामान्यत: ताँबा, लोहा, फास्फोरस आदि तत्व हरे चारे में अच्छी मात्रा में होते हैं, जोकि भेड़-बकरियों को उसी से प्राप्त हो जाते हैं। परन्तु जब चारा सूखने लगता है तो उसमें इनकी मात्रा कम हो जाती है। चोकर में फास्फोरस तथा मैग्नीज दोनो प्रचूर मात्रा में पाये जाते हैं अनाजों में कैल्सियम की मात्रा कम होती हैं लेकिन खलियों, फलीदार चारों व बीजो में ज्यादा होती है। इसी तरह अफलीदार चारों में फलीदार चारों से कम कैल्सियम पाया जाता है। पौधों के मुकाबले पशु स्त्रोत के आहार जैसे मछली का

चरागाह में चरती हुई भेड़ बकरियां

सारणी 2. भेड़-बकरियों में खनिज तत्वों के न्यूनता एवं अधिकता के लक्षण तथा स्त्रोत

खनिज तत्व	न्यूनता के लक्षण	अधिकता के लक्षण	स्त्रोत
कैल्सियम	दुग्ध उत्पादन एवं वृद्ध मे कमी	जोड़ों में सूजन, लंगड़ापन, चाल मे कड़ापन, अचानक बीमारी से मृत्यु	दूध, हरा चारा, पिसा चाक, डाइ कैल्सियम फास्फेट, रॉक फास्फेट, शिरा, कैल्सियम ग्लूकोनेट इन्जैक्शन
फास्फोरस	वृद्धि तथा जनन क्षमता में कमी और	प्रजनन संबंधी विकार, हड्डियों का टूटना, चादर, चमड़ा, कपड़ा आदि असामान्य चीजें खाना। खाद्य अंतर्ग्रहण में कमी	दूध, अनाज, मछली व हड्डी उप-उत्पाद, डाइ कैल्सियम फास्फेट, रॉक कैल्सियम फास्फेट।
मैग्नीशियम	खाद्य अंतर्ग्रहण तथा दुग्ध उत्पादन मे कमी	घास टिटेनी के कारण उत्तेजनशीलता में वृद्धि, ऐंठन तथा मृत्यु	बिनौला, अलसी खल, चोकर, मैग्नीशियम ऑक्साइड, मैग्नीशियम सल्फेट इंजैक्शन तथा चरागाहों में मैग्नीशियम उर्वरक।
सोडियम और क्लोरीन	असामान्य भूख, वृद्धि एवं दुग्ध उत्पादन मे कमी	भूख का ह्रास एवं देह भार में तीव्र क्षय	सादा नमक, मांस- मछली उप-उत्पाद
पोटैशियम	सामान्यत: कमी नहीं होती हैं परन्तु कभी-कभी मांस पेशियों मे कमजोरी, पिछली टांगों में कड़ापन, मूर्छा, संभावित मृत्यु		
काँपर	बढ़वार में कमी तथा भेड़ों में ऊन वृद्धि में कमी	रक्त की कमी, प्रजनन क्षमता मे कमी, हड्डियों में दुर्बलता, भेड़ों में कठोर ऊन, मेमनों में स्वेबैक रोग।	काँपर लवण तथा पेड़ों के बीज
आयरन	बच्चों में रक्त अल्पता,		हरे पेड़-पौधे, आयरन डैक्सट्रान इंजैक्शन
कोबाल्ट	क्षुधा, वृद्धि एवं ऊन और बालों मे कमी	आँखों से पानी आना, रक्त अल्पता, प्रजनन क्षमता में कमी, सफेद यकृत रोग, खुरदरा एवं क्षीण लोम चर्म	कोबाल्ट लवण, विटामिन बी12, सभी प्राकृतिक आहार।
मैंग्नीज	बांझपन, बार- बार गर्भपात,चलने में अनिच्छा, आगे की टांगो में विकार, अत्यधिक लार निकलना	खाद्य अंतर्ग्रहण में कमी, नवजात बच्चों में अस्थि पंजर संबंधी असामान्यता।	मक्का, जौ, मैंग्नीज लवण, सभी चारे।
आयोडीन	नवजात में मृत्यु, दुग्ध उत्पादन में कमी भेड़ में ऊन उत्पादन मे कमी	घेघा रोग, विलम्बित मस्तिष्क विकास, भ्रूण के भार में कमी, शीत के प्रति अति संवेदनशीलता	आयोडीन युक्त नमक, मछली चूरा, अधिकांश चारे।
जिंक	वृद्धि एवं प्रजनन दर में गिरावट	सफेद मांसपेशी रोग, मांसपेशी में घाव और भेड़ों में हृदय में घावों का बढ़ना।	सभी प्राकृतिक आहार, चोकर, अनाज तथा जिंक कार्बोनेट।

चूरा, हड्डी का चूरा खनिज तत्वों के बहुत अच्छे स्त्रोत हैं।

चरागाह की वनस्पति, मिट्टी, सिंचाई और पीने का पानी तथा फसल में उर्वरकों का प्रयोग आदि कई कारण हैं जिनसे भेड़-बकरियों के आहार में खनिजों की आवश्यकता एवं मात्रा पर भारी प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि पशुओं में खनिज पोषण क्षेत्रीय आधार पर निर्भर करता है। औद्योगीकरण की वजह से बढ़ते हुए जल प्रदूषण के कारण कई बार जाने-अनजाने यह जल भेड़-बकरियों के आहार का हिस्सा बन जाता है। जिससे कभी-कभी भारी धातुओं की विषाक्ता भी हो जाती है। चरने के समय पशु घास के साथ-साथ लगभग 100-150 ग्राम तक मिट्टी भी खा लेते है। इसी वजह से मिट्टी में उपस्थित खनिज तत्व उनके शरीर की आवश्यकता को पूरा करते है। और जो खनिज तत्व मिट्टी में नहीं होते, वह आहार द्वारा दिये जाते हैं। जिन भेड़-बकरियों को मांस उत्पादन के लिये पाला जाता है। उन्हें सघन व्यवस्था के अंतर्गत रखा जाता हैं। सघन व्यवस्था में पशुओं को 40-50 प्रतिशत चारा और 60-50 प्रतिशत रातिब मिश्रण मिला कर आहार दिया जाता है। रातिब मिश्रण में 2 प्रतिशत की दर से खनिज मिश्रण मिलाया जाता है। जिससे न्यूनता वाले खनिज तत्वो की पूर्ति हो जाती है और अधिक उत्पादन भी प्राप्त होता है। गर्भावस्था में भेड़-बकरियों को 25 प्रतिशत अधिक खनिज लवणों की आवश्यकता होती है इसीलिये इस दौरान फ्लसिंग आहार देते हैं। इससे मेढ़ों तथा बकरों की प्रजनन क्षमता बढ़ती है तथा गर्भवती भेड़ और बकरियों में जुड़वां बच्चों के जन्म में वृद्धि होती हैं। साथ ही जन्म के तुरन्त बाद बच्चों की मृत्यु दर में भी कमी आती है। यदि किसी

कारणवश किसान रातिब मिश्रण देने में असमर्थ हो तो बाजार में उपलब्ध खनिज मिश्रण, खनिज मिश्रण ब्लॉक, आयोडीन व गंधकयुक्त नमक के ब्लॉक, बाड़े में रख सकते हैं जिसे पशु अपनी इच्छा से चाटते रहते हैं और खनिज लवणों की पूर्ति होती रहती है। साधारण तौर पर भेड़-बकरियों को दिन भर मे 2 से 3 ली. पानी की आवश्यकता होती है परन्तु गर्मियों मे 3 से 5 ली. पानी की आवश्यकता हो जाती है। साधारणतया पशुओं को दिन में 2 बार परन्तु गर्मियों मे 3-4 बार पानी पिलाना चाहिए।, यदि पानी पर्याप्त मात्रा में नहीं मिलता तो पशुओं में चारा-दाना खाने तथा उसे पचाने की क्षमता कम हो जाती है।

❑

घर के आंगन में जैसे तुलसी दल या सुहागन के भाल पर बिन्दी,
देवता के मुकुट पर जैसे फूल वैसे ही भारत के भाल पर हिन्दी।

– गोविन्द प्रसाद श्रीवास्तव

जब मनुष्य के बुरे दिन हो,उसे अत्यधिक उपदेश देने की अपेक्षा
उसकी थोड़ी सहायता कर देना ज्यादा अच्छा है।

– बुलवर

अधिक दूध पाने के लिए पशुओं को संतुलित आहार खिलायें

महावीर सिंह

गाय

दुधारू पशु गाय अथवा भैंस कितना दूध दे सकती है यह इस बात पर निर्भर करता है कि दूध उत्पादन की उसकी कितनी क्षमता है और उसे किस प्रकार का आहार मिलता है। कम उत्पादन क्षमता वाले पशु की दूध की मात्रा केवल अच्छा आहार देने से नहीं बढ़ाई जा सकती है। इसी प्रकार दूध उत्पादन की अधिक क्षमता वाले पशु से अधिक दूध अच्छे आहार के बिना नहीं लिया जा सकता है।

दूध देने वाले पशु का आहार तय करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पर्याप्त मात्रा में पौष्टिक तत्व उसकी जीवन निर्वाह क्रियाओं में खर्च होते हैं। ये क्रियायें हैं श्वास का चलना, रक्त का प्रवाह शरीर के ताप का स्थिर बना रहना, खुरों का घिसना और बालों का गिरना शरीर के भार और स्वास्थ्य को बनाये रखने के अतिरिक्त दूध के रूप में शरीर से तत्व बाहर चले जाते हैं। आहार के द्वारा इन तत्वों को पूरा करना चाहिए।

आहार के प्रमुख तत्व

पशु आहार में मुख्यत: निम्न लिखित तत्व होते हैं :-

कार्बोहाईड्रेट : पशु शरीर के ताप को बनाये रखने और विभिन्न अंगों की क्रियाशीलता के लिए ऊर्जा की जरूरत होती है। पशुओं को अनाज, भूसा और कडवी आदि से कार्बोहाड्रेट मिलता है।

प्रोटीन : शरीर की मांस पेशियों के निर्माण में प्रोटीन की आवश्यकता होती है। पेट में पलने वाले बच्चे और दूध के बनने के लिए भी प्रोटीन की आवश्यकता होती है। पशु आहार में हरे चारे, खल आदि देने से प्रोटीन को पूरा किया जा सकता है।

वसा : पशु शरीर में वसा उर्जा प्राप्त होती है जिसे शरीर की अनेक क्रियाओं को चलाने के काम लाया जाता है। सामान्यत: पशुओं को जो चारा, दाना आदि आहार में खिलाया जाता है उससे वसा की आवश्यक मात्रा मिल जाती है।

खनिज तत्व : पशु के शरीर में खनिज तत्वों की थोड़ी मात्रा की जरूरत होती है। परन्तु इनका बहुत महत्व है। खनिज तत्व हड्डियों के बनने, मांस पेशियों तथा कोमल तन्तुओं के विकास में काम आते हैं। मुख्य रूप से कैल्शियम, फास्फोरस, पोटैशियम सोडियम, मैग्नीशियम, सल्फर, तांबा, लोहा और जिंक आदि तत्वों की आवश्यकता पड़ती है। सामान्यत: हड्डी का चूरा, खड़िया, मिट्टी और सामाधर नमक खिलाने से अति आवश्यक तत्व पशु को प्राप्त हो जाते हैं।

विटामिन्स : जुगाली करने वाले पशु अपने शरीर में विटामिन बी स्वयं बना लेते हैं और आहार में विटामिन ए देने की जरूरत पड़ती है। हरे चारों को पशुओं को खिलाने से पशु उनसे विटामिन ए भी बना सकते हैं। विटामिन डी की कमी से हड्डियां और दांत कमजोर हो जाते हैं। प्राय: प्रकाश की कमी वाले स्थानों में ही इसे ऊपर से देने की आवश्यकता पड़ती है।

संतुलित आहार : पशुओं की बढ़वार, स्वास्थ्य तथा दूध उत्पादन के लिये ऊपर लिखे पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता होती है। ऐसा आहार जिसमें पशुओं के लिय 24 घंटों में आवश्यक सभी पौष्टिक पदार्थ उचित मात्रा एवं अनुपात से मौजूद हो संतुलित आहार कहलाता है। किसी भी तत्व की मात्रा जरूरत से कम अथवा अधिक होने पर लाभ के स्थान पर हानि हो सकती है।

पशुओं को खिलाये जाने वाले खाद्य पदार्थों में ऐसा कोई भी पदार्थ नहीं है, जिसमें पशुओं के लिए आवश्यक सभी पौष्टिक तत्व हों। इसलिये पशु आहार को संतुलित बनाने के लिए आवश्यक है, उन्हें कई प्रकार की चीजों चारे तथा दानों आदि रूप में खिलाये जायें।

अच्छे आहार के गुण : इनमें निम्नलिखित गुण होने चाहिए।

- आहार जल्दी पचने वाला होना चाहिए, जिससे शीघ्र ही जरूरी तत्व मिल सकें।
- आहार स्वादिष्ट होने पर पशु उसे भरपेट खा सकता है और पर्याप्त मात्रा में पशु को पौष्टिक तत्व मिल सकते हैं।
- पशु को आवश्यक तत्वों के साथ-साथ पर्याप्त मात्रा भी आहार के रूप से देना जरूरी है क्योंकि इससे पशु का पेट भर जाता है और उसकी भूख मिट जाती है। मोटे तौर पर पशु आहार में आवश्यक कुल शुष्क पदार्थ का 2/3 भाग चारों द्वारा और 1/3 भाग दाने द्वारा देना चाहिए। दुधारू पशु अपने शरीर के भार के अनुसार लगभग 2.5 से 3.0 किलो शुष्क पदार्थ प्रति 100 किलो शरीर भार पर खा लेते हैं।
- कई प्रकार के खाद्य पदार्थ आहार में मिलाकर

भैंस

खिलाने से पशु का स्वाद बदल जाता है और दूसरे वे पौष्टिक तत्वों को पूरा भी करते हैं क्योंकि एक आहार में होने वाले तत्व की कमी दूसरे से पूरी हो जाती है।

- पशु के आहार में खिलाये जाने वाले खाद्य पदार्थों की कीमत कम होने से दूध उत्पादन की लागत कम आती है।

दलहनी हरे चारों के साथ आहार

दलहनी चारों में प्रोटीन, खनिज और विटामिन की मात्रा अधिक होती है और पशु इन्हें शौक से खाते हैं। इन चारों में बरसीम, रिजका, लोबिया, ग्वार, मूंग और उर्द मुख्य है। गाय या भैंस को इसकी लगभग निम्न मात्रा खिलानी चाहिए। हरा चारा 20-25 किलोग्राम, भूसा अथवा कडवी 7-8 किलोग्राम और दाना मिश्रण 2-2.5 किलोग्राम।

बिना दाल वाले चारों के साथ आहार

इसमें ज्वार, मक्का, बाजरा, जई आदि आते हैं। इनके साथ खली मिला हुआ दाना अधिक मात्रा में खिलाने से आहार संतुलित हो जाता है। इस प्रकार के चारों के साथ दैनिक आहार की मात्रा जैसे हरा चारा 20-25 किलोग्राम, भूसा अथवा कडवी 7-8 किलोग्राम और दाना मिश्रण 2.5-3 किलोग्राम होनी चाहिए।

अधिक हरे चारे के साथ पशु आहार

साधन सम्पन्न किसानों को अधिक मात्रा में हरे चारे प्राप्त हो सकते हैं और इस दशा से दुधारू गाय या भैंस को अधिक मात्रा में हरे चारे खिलाने के लिए दलहनी और बिना दाल वाले चारों को मिलाकर खिलाना चाहिए। खेती के विचार से भी अधिक अच्छा होगा यदि इन दोनों प्रकार के चारो को मिलाकर ही उगाया जायें।

उपर्युक्त चारा, दानों के अतिरिक्त दुधारू पशुओं को मौसम के अनुकूल सर्दियों में न अधिक ठंडा और गर्मियों में न अधिक गर्म, ताजा एवं शुद्ध पानी मिलना चाहिए। ❑

लोकतंत्र हिंदी के बिना चल नहीं सकता और यदि चलता है तो वह झूठा है।

– जैनेंद्र कुमार

प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

– महर्षि दयानंद सरस्वती

गोपालन एवं चारा उत्पादन पर आधारित ग्राम विकास

हरनारायण यादव

गो-आधारित ग्राम विकास

भारत में गो को माता के रूप में माना गया है। धार्मिक ग्रन्थों में संत पुरूषों व समाज सेवियों ने भी गो रक्षा व गोसंवर्धन को धर्म के साथ जोड़ा है। रामायण में लिखा है विप्र धेनु सुर संतहित, लीन मनुज अवतार कहकर भगवान के अवतरित होने का कारण भी गो रक्षा बताया है। गोमय लक्ष्मी कहकर गो की प्रशंसा की गई है। गो के रोम रोम में देवताओं का वास बताया गया है।

हमारे यहां भारत माता, तुलसी माता, गोमाता, गंगा माता, जैसे शब्द इसी उदार भावना के द्योतक हैं अति प्राचीन काल से हमारे पूर्वजों ने इस सत्य का साक्षात्कार किया था कि प्राण अन्यमय है, अत: उन्होंने अन्न उत्पादन के लिए कृषि शास्त्र विकसित किया। महाराज भृगु ने प्रजा के हितार्थ अपने हाथ से कृषि करना प्रारम्भ किया था येन दुग्धा मही पूर्व प्रजानांहित कारणात। धरती का दोहन करने वाले भृगु को धरती का पिता कहा गया है। इसी भूमि से अन्न उत्पन्न हुआ तथा अन्न से जीवन बना इसलिए धरती मातृवत् बनी।

मानव शैशवास्था में अपनी मां के दूध पर पलता है। उसका शेष जीवन गो दुग्ध व अन्न पर निर्भर करता है। धरती के समान गो को भी माता कहा गया है। अथर्ववेद में गो को अनुपमेय कहा गया है। धेनु: सदनमूरणीयाम्। गाय के दुग्ध, घी, छाछ, दही, गोमूत्र तथा पंचगव्य का सेवन करने से शारीरिक, मानसिक व बौद्धिक, दृष्टि से हम स्वस्थ व निरोग रहते थे। गाय अखाद्य चारा खाकर खाद्य दूध उपलब्ध कराती है। अत: उसे हमने गोपिन भी कहा है।

कृषि एवं गोपालन

ग्राम विकास का आधार कृषि है, कृषि का आधार गो है। वह मात्र पशु नहीं है परिवार में उसे महान श्रद्धा का स्थान प्राप्त है। घर की रसोई में बने भोजन का प्रथम ग्रास गो के लिए होता है। गोपनीय गुप्त, गोष्ठी गवाक्ष, गोपाल शब्द गो आधारित हिन्दु संस्कृति को प्रगट करते हैं। प्राचीन ऋषि (वैज्ञानिकों) ने गाय को पशु नहीं अपितु देवताओं का वास स्थान कहा है। गो रक्षा का अर्थ सामान्य जीव की रक्षा नहीं मानव जीवन की रक्षा करना है।

ग्राम विकास के अंतर्गत कृषि, उद्योग, स्वास्थ्य, शिक्षा, संस्कार, स्वावलंबन, समरसता, पर्यावरण, स्वाभिमान आदि विषय आते हैं। कृषि का आधार मिट्टी है। मिट्टी एक अमूल्य प्राकृतिक सम्पदा है। विभिन्न प्रकार के पौधों चारा वृक्षों तथा अन्य वनस्पतियों को उगाने के लिए भूमि अनिवार्य है। हजारों वर्षों से हमारे पूर्वज इस धरती पर खेती करते आये हैं।

ग्राम विकास में गो का योगदान

1. **गोमय खाद :** धरती की प्राकृतिक खुराक गोमय है, गोमय से (गोबर) खाद निर्माण करने की भिन्न पद्धतियां हैं जिनके द्वारा प्रत्येक किसान अपने घर में खाद निर्माण करके स्वावलम्बी बन सकता है।

1. गोबर गैस/वायोगेस की सर्वोत्तम जैविक खाद है। अन्य कचरा के साथ मिला देने से वह भी कम्पोस्ट खाद बन जाता है।
2. नाडेप पद्धति : 10-5-3 का जालीदार गड्ढा बनाकर कचरा गोबर व मिट्टी भरी जाती है। तीन चार माह में बढ़िया खाद बन जाता है। रू. 2 प्रति किग्रा के भाव से बेचने पर 6000.00 रूपये का खाद एक बार में बनता है। वर्ष में 18000.00 का खाद कृषक बना सकता है। इस पद्धति से 1 किलो गोबर से 20 प्रतिशत पोषक तत्व वाला खाद बनता है जो भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि कर फसल उत्पादन में सहायक होता है।
3. सींग खाद : गाय के सींग में गोबर भरकर भूमि में 12-4-3 फीट का गड्ढा बनाकर उसमें गोबर का कचरा डालकर सींग को 6 माह के लिए उसमें गाड़ देते हैं। बाद में उसे निकालते हैं तो सींग खाद बन जाती है जो एक एकड़ जमीन के लिए 35 किलो ग्राम खाद पर्याप्त होती है।

2. **गोमूत्र :** यह तो महारसायन है गोमूत्र से अनेक प्रकार के आसव, वटिका नेत्र बिन्दु आदि औषधियां बनाई जा रही हैं। कीटनाशक के रूप में गोमूत्र में नीम के फल व पत्तियां उपयोग कर उत्तम प्रकार का कीटनाशक निर्माण किया जाता है। जो पर्यावरण एवं उत्पादन को प्रदूषित नहीं करता।

देश में गो अनुसंधान केन्द्रों पर चल रहे प्रयोगों ने सिद्ध कर दिया है कि दूध न देने वाली गाय से भी हम गोबर व गोमूत्र के द्वारा भी हम अपनी आर्थिक स्थिति सुधार सकते हैं। गोबर गैस के प्रयोग से महिलाओं के भोजन पकाने पर स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता ग्राम के कारीगरों, पाइप फिंटिंग करने वालों सुधारने मरम्मत करने वालों को कार्य ग्राम में ही मिल जाता है।

3. **गो दूध :** गो से प्राप्त दूध में वही सारे गुण उपस्थित रहते हैं। जो एक मां के दूध में रहते हैं। गो दुग्ध से दही, घी, छाछ, मलाई, पेडा इत्यादि उत्तम पदार्थों का निर्माण किया जाता है। एक गाय से 5-6 सदस्यों के परिवार का भरण पोषण हो सकता है। गाय दूध दही

घी खाने के योग्य है। गायों का दूध घी देश में वीरों को खिलाया जाए जिससे उनका बल व प्रेम बढ़े और वे पूर्ण हों जावें और वे आतंक फैलाने वालों को युद्ध में मार सकें। हवन में घी के उपयोग से प्रदूषण मुक्ति और पर्यावरण शुद्ध व वायुमंडल साफ होता है।

गाय के विशेष गुण : गायें दुबलों को तनदुरस्त बनाती हैं। घर को पवित्र तथा कल्याण कारक बनाती हैं। गायें ऐश्वर्य का स्त्रोत हैं। महात्मां गांधी कहते थे कि गाय बचेगी तो मनुष्य बचेगा वह नष्ट हुई तो उसके साथ हम सभी प्रकृति, पशु पक्षी पर्यावरण रक्षण और हमारी सभ्यता नष्ट हो जायेगी। इसी प्रकार महामना मालवीय कहते थे कि ग्रामे ग्रामे सभा.....शुभ कथा पाठशाला, सदनमेव च अर्थात प्रत्येक ग्राम में गोशाला पाठशाला आदि होना चाहिए।

महाकवि घाघ ने भी गाय के दूध को उपयोगी बताते हुए अपनी कहावतों में सच्चाई प्रकट की है–

गाय दुहे बिन छाने लावें गर्मा गर्म तुरत चढ़ावें।
बाढ़े बल और बुद्धि भाई घाघ बात यह सांची गाई।।

अर्थात गाय के दूध को दोहने के तुरन्त बाद बिना छाने ही पी जाना चाहिए। जिससे बल और बुद्धि में अधिक वृद्धि होती है। कवि घाघ ने अपने अनुभव द्वारा यह बात लोगों को बताई है। लेकिन आज के वैज्ञानिक युग में यह बात मान्य नहीं है क्योंकि बीमारियों से बचने कि लिए स्वच्छता एवं सफाई आवश्यक है। अत: दूध को दोहने के तुरन्त बाद छानकर व गर्म करके ही सेवन करना चाहिए जिससे स्वास्थ्य लाभ प्राप्त हो सके।

गो विज्ञान : क्या आप जानते हैं ?

भारत वर्ष में सर्वाधिक गो पशु मध्य प्रदेश में हैं। जबकि उत्तर प्रदेश तथा बिहार का क्रमश: दूसरा तथा तीसरा स्थान है। उपयोगिता के आधार पर गो पशुओं को तीन वर्गों में बांटा गया है। दुधारू, भारवाही और द्विकाजी देश में गोपशुओं की 27 मान्यता प्राप्त नस्लें हैं। गो पशुओं की द्विकाजी नस्लें वे हैं जिनमें दूध व कार्यशील बछड़ों के उत्पादन के लिए पाला जाता है। गायों की सबसे भारी नस्ल कांगरेज है। दुधारू गाय का प्रमुख लक्षण है शरीर लम्बा और मुलायम होता है। साहीवाल हरियाणा व नागोरी क्रमश: प्रमुख दुधारू, द्विमाजी एवं मारवाही नस्लें हैं। दुधारू नस्ल के पशुओं के शरीर भारी, गल कम्बल तथा लटके हुए सींग सिर के दोनों ओर निकलकर प्राय: मुड़े हुए होते हैं।

दुधारू नस्ल की गायें दूध अधिक देती हैं लेकिन दुधारू कार्य करने में सुस्त होते हैं। दुधारू समूह में साहीवाल, सिन्धी, गिर, और देवनी नस्ल के पशु आते हैं। भारत की सभी नस्ल की गायों का दूध यूरोपीय गायों की तुलना में श्रेष्ठ माना जाता है। भारवाली नस्ल के पशुओं में दुग्धोत्पादन कम होता है। होलस्टीन, फ्रीजियन गायों का दूध उत्पादन विश्व में अन्य गायों की तुलना में सर्वाधिक है।

विदेशी गायों का दुग्ध उत्पादन भारतीय गायों की तुलना में लगभग चार गुना अधिक होता है। किन्तु उसमें बसा तथा वसारहित पदार्थों की कमी होती है। देशीगाय सर्वथा अधिक उपयोगी होती है। उसमें गोमूत्र, गोबर, दूध, दही एवं घृत तथा उससे तैयार पंचगव्य विविध रूप से उपयोगी है।

पौष्टिक भोजन

गायों को हरा चारा एवं पुष्ट आहार खिलाया जाना चाहिए। गायों के चरागाहों में प्रोटीन से भरपूर चारा बरसीम स्टाइलो, रिजका, सूबबूल लीफमील, स्टाइलो लीफमील आदि खाने को मात्रा के हिसाब से दिया जाना चाहिए।

सुबबूल लीफमील : इसमें 28 प्रतिशत प्रोटीन रहता है तथा शुष्क पदार्थ 93 प्रतिशत पशु आहार में 2 भाग भूसा 1 भाग लीफमील एवं दाने की मात्रा आधा कर दें। इसकी खुराक गाय को 1–3 किग्रा प्रतिदिन दें।

स्टाइलो लीफमील पाउडर : इसमें प्रोटीन (सीपी) 12 प्रतिशत तथा शुष्क पदार्थ 92 प्रतिशत होता है। इसका उपयोग गाय के लिए 2 से 5 किलो प्रतिदिन भूसा के साथ मिलाकर खिलायें तथा उसका अपनी संतान की तरह पालन करें। गोशालायें हवादार, सुरक्षित, सुन्दर एवं स्वच्छ हो जिससे वे उसमें घूमफिर सकें।

उत्तम चारा प्रजनन बीज प्रशिक्षण एवं चारा संबंधी जानकारी के लिए कृषक भाई भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान में आकर वैज्ञानिकों से सम्पर्क कर विभिन्न प्रकार की चारा फसलों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। तथा चारा उत्पादन कर घास बरसीम आदि को बाजार में बेचकर आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

ग्रामों में होंगे चरागाह : प्राचीन काल में हम देखते आए हैं कि राजा महाराजाओं से लेकर सर्व साधारण व्यक्ति भी गाय को चरागाह में चराने एवं पालन पोषण करने में अपने को धन्य समझते थे इसको एक मुख्य कार्य मानते थे। उत्तम समय प्रत्येक ग्राम में गायों के लिए गोचर भूमि सुरक्षित चरागाह के लिए प्रत्येक ग्राम में 50 से 100 एकड़ तक पड़ी रहती थी। उसमें पशुओं को प्राकृतिक रूप से उगने वाले चारे पशु आहार के रूप में प्राप्त होते थे। लेकिन वर्तमान युग में देश की जनसंख्या अधिक बढ़ जाने से भूमि प्रत्येक ग्राम में खेती एवं आबादी में प्रयोग होने लगी, और सीमित भूमि में ही ग्रामवासियों को कम पशु रखकर अपना जीवनयापन करने को मजबूर होना पड़ा। ऐसी परिस्थिति में कृषकों को अपनी जमीन में कुछ भूमि चारा फसलों के लिए सुरक्षित रखना होगी। जिससे वह वर्ष में फसल चक्र के अनुसार हरा पौष्टिक चारा अपने पशुओं के लिए प्राप्त कर सकते हैं।

चारा फसलों में मुख्य रूप से बरसीम रिजका जई जौ आदि को बोने से खेत की उर्वराशक्ति बढ़ती है। साथ ही दुधारू पशुओं को उत्तम पौष्टिक हरा चारा प्राप्त होता है। बरसीम की कटाई के बाद कृषक अप्रैल माह में अन्तिम कटाई बीज के लिए छोड़ दे। बरसीम के बीज को बाजार में रू. 80/–प्रति किग्रा के हिसाब से बेचकर आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। बुन्देलखण्ड में बीजों को इकट्ठा करने के लिए आप रबी में बोई जाने वाली फसलों की उन्नत एवं रोग रोधी प्रजातियों बरसीम बुन्देल बरसीम–1,2 एंव वरदान रिजका लूसर्न आर एल 88 आनन्द–2 चेतक तथा जई जे एचओ–822 जेएचओ 820 अथवा केंट उन्नत किस्म की प्रजातियां हैं। इनके बीजों को उत्पादन बढाकर कृषक भाई लाभ प्राप्त कर सकते हैं। सूबबूल को खेत की मेढ़ पर लगाकर पशुओं को

खिला सकते हैं। लकड़ी का ईंधन जलाने में प्रयोग में लाई जा सकती है।

उपसंहार

भारतीय संस्कृति के मनीषियों ने इतिहास को पढ़कर यह बात लिखी थी कि इस देश में दूध घी की नदियां बहती थीं। पानी पीने को मांगने पर दूध पीने को दिया जाता था। भारत वर्ष समृद्ध था किसी प्रकार की कमी नहीं थी धन धान्य से परिपूर्ण था।

इस कृषि प्रधान देश में छोटे व्यक्ति से लेकर बड़े बड़े राजा महाराजा भी कृषि एवं गाय आदि पशुओं को पालकर अपना जीवनाधार मानते थे। प्राचीन काल में हम चक्रवर्ती सम्राट महाराजा दिलीप को नन्दिनी गाय गो चराते इतिहास के पृष्ठों में बताया है। इसीलिए देश की कवियों ने इसका कविता रूप में वर्णन कर दिया।

नहीं थी आदत मुर्गा अण्डा भैंसा बकरा खाने की।
राजा से योगी तक को आदत थी गऊ चराने की।।

इसी प्रकार हमारे देश के मुस्लिम कवि रसखान को भी लिखना पड़ा–

जो पशु हों तो कहा वस मेरो, चरों नित नन्द की धेनु मझारन।

सच में गाय वैदिक संस्कृति की आत्मा है जिसमें गौ न हो किसी आदर्श की कल्पना नहीं की जा सकती। विवाह में पिता कन्यादान से पूर्व भी पूर्ण गोदान करता है। एक नये गृहस्थ के लिए दहेज में अन्य सामग्री देने के पूर्व प्रथम पिता अपनी कन्या को गो देता था। ऐसा हमारी भारतीय संस्कृति में देखने को मिलता है। अत: गोमाता का पालन करो। गोमाता का आदर करो। गो माता की जय हो।

देश के सबसे बड़े भू–भाग में बोली जाने वाली हिंदी ही राष्ट्रभाषा पद की अधिकारिणी है।

– नेताजी सुभाष चन्द्र बोस

राष्ट्र के एकीकरण के लिए सर्वमान्य भाषा के रूप में हिंदी से बलशाली कोई तत्व नहीं है।

– लाला लाजपत राय

शहतूत : एक गुणकारी व लाभकारी फल वृक्ष

सुधीर कुमार

शहतूत वृक्ष

शहतूत एक छाया व फल देने वाला वृक्ष है। यह उत्तरी गोलार्द्ध की समशीतोष्ण एवं अर्द्धउष्ण जलवायु में बहुतायत से पाया जाता है। वैज्ञानिक तौर पर इसे मोरस एल्बा के नाम से जाना जाता है और इसका उद्‌गम स्थान चीन माना जाता है। भारत में इसकी कई प्रजातियां पाई जाती हैं। जिनमें से अधिकतर को वैज्ञानिकों ने मोरस एल्बा का ही पर्याय माना है। यह हिमालय की पहाड़ियों एवं भारत के मैदानी भागों में भी पाया जाता है। रेशम उद्योग मुख्यत: शहतूत पर ही निर्भर करता है इसलिए मोरस एल्बा की मल्टी कॉलिस तथा एट्रोपरपूरिया प्रजातियां उत्तम मानी जाती हैं क्योंकि ये शीघ्र बढ़ने वाली और रेशम कीटों के लिए मुलायम पत्ती प्रदान करने वाली होती हैं। इसके अतिरिक्त इनसे स्वादिष्ट फल भी प्राप्त होते हैं।

उपयोगिता

शहतूत की खेती मुख्यत: रेशम उत्पादन के लिए की जाती है लेकिन इसके अन्य भागों का प्रयोग भी विभिन्न कार्यों में किया जाता है।

जड़ : साधारणतया इसकी जड़ जलाऊ लकड़ी के रूप में प्रयोग की जाती है। लेकिन इसकी जड़ तथा जड़ की छाल से दस्त रोकने व पेट से कीड़े निकालने/मारने की औषधि भी तैयार की जाती है।

तना/शाखायें : इससे प्राप्त अनुपयुक्त लकड़ी ईंधन के काम में लाई जाती है। इसकी लकड़ी हॉकी, बल्ले, रैकेट, बेंत/छड़ी, मेज, कुर्सी, टोकरी आदि बनाने में भी प्रयोग होती है क्योंकि इसकी लकड़ी सामान्य, टिकाऊ, आसानी से चीरी/गढ़ी जाने वाली एवं लचीली होती है। लकड़ी भारी और मजबूत होने के कारण इसे कृषि यंत्रों/औजारों आदि के बनाने में भी प्रयोग किया जाता है।

छाल : शहतूत की शाखाओं की छाल से लुग्दी तैयार करके कागज बनाया जाता है साथ ही साथ इससे महीन एवं मुलायम रेशा प्राप्त करके कपड़ा भी बनाया जाता है।

पत्तियां : पत्तियों की उपज खाद, पौधों की संख्या, आकार, सिंचाई की व्यवस्था, भूमि की उर्वरता तथा उन्हें कितनी बार तोड़ा गया है, पर निर्भर करती है। फिर भी उन्नत प्रजातियों से पत्तियों का उत्पादन 19-28 टन/हेक्टर तक प्राप्त किया जा सकता है इसकी पत्तियों में सिट्रॉल, एसीटेट, लिनोलॉल, लिनेलिल एवं वीटा सिस्टोस्टेराल तथा अघुलनशील मेथेनॉल उचित मात्रा में होता है। यह रेशम कीट का उचित खाद्य पदार्थ है जो कीटों को आकर्षित करने, पत्तियों को चबाने एवं निगलने की प्रक्रिया को आसान करके रेशम उत्पादन में सहायक होते हैं।

इतना ही नहीं, शहतूत की पत्तियां अच्छी गुणवत्ता वाला चारा भी प्रदान करती हैं और इसे कम गुणवत्ता वाले चारे में मिलाकर पशुओं को खिलाया जा सकता है, क्योंकि चारे की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला तत्व 'टैनिन' की मात्रा मात्र 0.8 प्रतिशत तक होती है जबकि इसकी यह मात्रा किसी भी चारे में 5 प्रतिशत तक सुरक्षित मानी जाती है।

इसकी पत्तियों में 15.00 - 27.64 प्रतिशत अपरिष्कृत प्रोटीन, 2.30-8.04 प्रतिशत ईथर सत (निचोड़),9.07-15.27 प्रतिशत अपरिष्कृत रेशा, 47.98-49.70 प्रतिशत नत्रजन रहित सत, 63.25 प्रतिशत कुल कार्बोहाईड्रेट, 14.32-22.87 प्रतिशत कुल राख, 2.42-4.71 प्रतिशत चूना तथा 0.23-0.97 प्रतिशत फास्फोरस पाया जाता है। इसके अतिरिक्त पत्तियों में विटामिन ए,बी-1 भी प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं।

फल : इसका फल कैटकिन कहलाता है और सीधा खाने में ही प्रयोग होता है। इस के अलावा भी इसे रस बनाने व मीठी चीजें तैयार करने के काम में लाया जाता है। किण्वन की प्रक्रिया के फल स्वरूप इससे शराब भी तैयार की जाती है। शहतूत के फल दस्तावर व शरीर को शीतलता प्रदान करने वाले होते हैं और साथ ही मंदाग्नि जैसे रोग की औषधि बनाने में भी इनका प्रयोग होता है। इसके फलों में 87.5 प्रतिशत नमी, 1.5 प्रतिशत प्रोटीन, 0.4 प्रतिशत वसा, 8.3 प्रतिशत कार्बोहाईड्रेट, 1.4 प्रतिशत रेशा, 0.9 प्रतिशत खनिज पदार्थ, 174 माइक्रोग्राम/100 ग्राम विटामिन ए आदि पोषक तत्व पाये जाते हैं

बीज : इसका बीज महीन होता है और फल के साथ ही खा लिया जाता है। बीज से 25-35 प्रतिशत तक पीले रंग का तेल भी प्राप्त होता है।

इसके अतिरिक्त इन वृक्षों को कृषि वानिकी में सामाजिक वानिकी के रूप में भी लगाते हैं जिससे न केवल अनुपयुक्त भूमि का सदुपयोग होता है बल्कि मृदा कटाव रूकने के साथ पर्यावरण भी प्रदूषित होने से बचता है।

भारतवर्ष में पशुधन एवं चारे का परिदृश्य

सुनील कुमार, सुरेन्द्र कुमार गुप्ता एवं अरूण कुमार शुक्ला

भारतवर्ष में 65 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर आधारित है, भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का योगदान 4.5 प्रतिशत है। पशुपालन कृषि का एक महत्वपूर्ण स्तम्भ है जिसका 25 प्रतिशत योगदान कृषि में हैं। 17वीं पशुधन जनसंख्या (2003) के अनुसार देश में 485 मिलियन पशुधन है जिसके अन्तर्गत 185 मिलियन गाय, 98 मिलियन भैंस, 61 मिलियन भेंड़, 124 मिलियन बकरी, 13 मिलियन सुअर तथा 11 मिलियन अन्य पशु जैसे- ऊंट, घोड़े इत्यादि है। इस पशुधन की वृद्धि 1951-2007 तक 1.5 प्रतिशत प्रतिवर्ष है। इतनी बड़ी पशुधन के कारण आज हमारा देश 102 मिलियन टन दूध उत्पादन कर विश्व में प्रथम स्थान तथा 4.8 मिलियन टन माँस उत्पादन कर आठवें स्थान पर है। पूरे विश्व के परिदृश्य में बात करें तो 16 प्रतिशत पशुधन मात्र 2.3 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र पर है।

सन् 1970-71 में चरागाह एवं चारा फसलों के अन्तर्गत 4.5 प्रतिशत क्षेत्र था किन्तु आज के परिदृश्य में लगातार बढ़ते मानव एवं पशुधन की संख्या, बढ़ता शहरीकरण, औद्योगीकरण एवं विकास कार्यों के चलते जहां मानव और जमीन का अनुपात सिकुड़ता चला जा रहा है वही वन, चरागाह एवं चारा फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र भी कम होता चला जा रहा है वर्तमान में 2-3 प्रतिशत क्षेत्र ही चरागाह एवं चारा फसलों के अन्तर्गत है।

पशुधन कृषकों द्वारा अपनाये जाने वाला दूसरा मुख्य व्यवसाय है। पशुधन देश की 52 प्रतिशत जनसंख्या को रोजगार दे रहा है। इन पशुपालकों में 45 प्रतिशत पशुधन ऐसे किसानों के पास है जिनके पास 1.0 हेक्टेअर से कम जमीन, 20 प्रतिशत पशुधन ऐसे किसानों के पास है जिनके पास 2.0 हेक्टेअर से भी कम जमीन है अर्थात् छोटे एवं सीमांत किसानों का यह बेजोड़ सहारा है।

पशुधन व्यवसाय पर ध्यान दें तो सर्वप्रथम उत्तम आहार (हरा/सूखा चारा) की बात आती है। पशुधन व्यवसाय में 70 प्रतिशत खर्च पशुपोषण पर होता है। यदि हरा एवं सूखा चारा उपलब्ध करा दिया जाये तो यह खर्च कम होकर पशु उत्पाद एवं गुणवत्ता दोनों में वृद्धि सम्भव है और पशुधन व्यवसाय को और मजबूती मिलेगी परिणाम स्वरूप देश की अर्थव्यवस्था मजबूत होगी।

वर्तमान में हमारे देश में 1025 मिलियन टन हरा चारा की मांग है जबकि आपूर्ति 390 मिलियन टन है अर्थात् 62 प्रतिशत चारे की कमी है इसी प्रकार 570 मिलियन टन सूखे चारे की आवश्यकता है जबकि आपूर्ति 443 मिलियन टन इत्यादि, 22 प्रतिशत सूखे चारे की कमी है यह कमी सन् 2025 तक बढ़कर 65 एवं 25 प्रतिशत क्रमश: हरा एवं सूखा चारा होगी।

विकसित देश में विकास का दौर चलायमान है तो एक अनुमान के अनुसार सन् 2025 तक मानव जनसंख्या बढ़कर 1400 मिलियन होगा वही शहरी जनसंख्या 27.8 प्रतिशत से बढ़कर 58 प्रतिशत होगा और दूध की उपभोग 3.3 प्रतिशत प्रतिवर्ष तथा माँस का उपयोग 2.8 प्रतिशत प्रतिवर्ष बढ़ेगा।

उपर्युक्त परिस्थितियों का आंकलन करें तो आज हमारे देश में चारा के क्षेत्र में अनुसंधान करने हेतु भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली के अधीनस्थ भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी और इस संस्थान के अलग-अलग जलवायु जैसे-शीतोष्ण में पालमपुर (हिमाचल प्रदेश) शुष्क में अविकानगर (राजस्थान) तथा दक्षिण क्षेत्र में उपोष्ण जलवायु में धारवाड़ (कर्नाटक) यह तीन क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र कार्यरत हैं। साथ ही अखिल भारतीय समन्वित चारा शोध परियोजना भी झांसी में है जिसके 18 शोध केन्द्र देश के विभिन्न 13 कृषि जलवायु क्षेत्र में खोले गये हैं। उपर्युक्त संस्थानों के अलावा देश के 39 कृषि विश्वविद्यालय में भी पशु चारा के क्षेत्र में शोध कार्य चल रहा है जिसका दायित्व ऐसी तकनीकी/किस्में/फसलचक्र इत्यादि का विकास करना है जो कम समय में व कम जमीन पर अधिक से अधिक चारा उत्पादन कर सकें। इसके अलावा चारा फसलों के उत्पादन गुणवत्ता, रखरखाव एवं उपयोग के क्षेत्र में भी कार्य चल रहा है। जो निम्नवत है:

- चारा फसलों की नई किस्मों का विकास
- वर्ष भर हरा चारा उत्पादन
- दाना-चारा उत्पादन
- चारा की अन्त: फसल
- चरागाह स्थापना एवं प्रबंधन
- वन-चरागाह पद्धति का विकास
- उद्यान-चरागाह पद्धति का विकास
- अनुपयुक्त भूमि पर चरागाह का विकास
- अधिक चारा का हे एवं साइलेज बनाकर संरक्षण
- सूखे चारे का बन्डल बनाकर भंडारण
- चारा फसलों की बीज उत्पादन एवं उपलब्धता

भारतवर्ष में पशुधन एवं चारे का परिदृश्य

❑

संस्थान की प्रचार-प्रसार गतिविधियां

भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी में संस्थान प्रदर्शनी का प्रदर्शन

भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी में आयोजित दो दिवसीय (29-30 जनवरी, 2009) राष्ट्रीय किसान मेला में भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी द्वारा विकसित विभिन्न चारा उत्पादन तकनीकी, चारा संरक्षण, पोस्ट हारवेस्ट तकनीकी आदि पर आधारित प्रदर्शनी लगायी गयी। मेले का उद्घाटन उप महानिदेशक (बागवानी) भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, डॉ. एच.पी. सिंह ने किया तत्पश्चात् भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के 25 संस्थानों तथा 20 निजी स्वयंसेवी संस्थानों के स्टालों का अवलोकन किया गया। भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी द्वारा प्रदर्शित स्टाल पर प्रदर्शित विभिन्न तकनीकियों के बारे में संस्थान के श्री जे.पी. उपाध्याय, तकनीकी अधिकारी द्वारा दी गई जानकारी की सराहना की गई। इस प्रदर्शनी में उ.प्र. के 12 जिलों, बिहार के 9 जिलों, झारखण्ड के 3 जिलों व उत्तराखण्ड के दो जिलों से आए हजारों किसानों स्वयंसेवी संगठन के प्रतिनिधियों व सरकारी गैर सरकारी संगठनों के लोगों ने भ्रमण कर प्रदर्शनी का अवलोकन किया व आवश्यक जानकारी प्राप्त की जिन्हें संस्थान द्वारा प्रकाशित चारा उत्पादन तकनीकी से संबंधित साहित्य भी वितरित किए गए। साथ ही मेले में तकनीकी सत्र के दौरान संस्थान की ओर से पशुपालन व हरा चारा उत्पादन विषय पर किसानों को आवश्यक जानकारी दी। अन्तिम दिन संस्थान द्वारा प्रदर्शित स्टाल को उत्कृष्ट प्रदर्शन के लिए प्रमाण पत्र दिया गया।

राष्ट्रीय डेयरी अनुंसधान संस्थान करनाल में प्रदर्शनी प्रदर्शन

राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल में दि. 26-28 फरवरी, 2009 तक राष्ट्रीय डेयरी व पशु मेला का आयोजन किया गया जिसमें भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झांसी ने संस्थान की उपलब्धियों व विभिन्न चारा उत्पादन तकनीकी, नई विकसित चारा प्रजातियों, पोस्ट हारवेस्ट, व पशु आहार से संबंधित विषय पर प्रदर्शनी लगायी, जिसका उद्घाटन मुख्य अतिथि डॉ. तेज प्रताप सिंह, कुलपति, चौधरी श्रवण कुमार हिमांचल प्रदेश, कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर ने किया। उक्त मेले में राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान के निदेशक डॉ. ए.के. श्रीवास्तव व अन्य लोग शामिल हुए। इस अवसर पर डॉ. तेजप्रताप सिंह जी ने संस्थान विकसित नवीन चारा प्रजातियों के बीज के बारे में अनेक प्रश्न किए जिनका त्वरित समाधान किया गया। तत्पश्चात् उन्होंने इस संस्थान की प्रदर्शित विभिन्न चारा उत्पादन तकनीकों को देखा व सराहा। इस अवसर पर पंजाब, हरियाणा, उ.प्र., राजस्थान व हिमांचल के किसानों ने बहुत बड़ी संख्या में संस्थान की प्रदर्शनी का भ्रमण कर आवश्यक जानकारी प्राप्त की व संबंधित साहित्य प्राप्त किए। इस प्रदर्शनी को डॉ. महाराज सिंह, प्रधान वैज्ञानिक व श्री जे.पी. उपाध्याय तकनीकी अधिकारी ने मूर्तिरूप प्रदान किया।

भ्रमण/ प्रशिक्षण

संस्थान में निम्नलिखित आगंतुकों ने संस्थान का भ्रमण किया गया इस भ्रमण के दौरान संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा उनकी चारा एवं पशुधन से संबंधित विभिन्न शंका- समस्याओं का समाधान किया।

1. दिनांक 14-16 जनवरी, 2009 कालेज ऑफ फारेस्ट्री एण्ड हिल एग्रीकल्चर, रानीचौरी के विद्यार्थियों के एक समूह द्वारा भ्रमण किया गया।
2. दिनांक 22 जनवरी,09 को कालेज ऑफ फारेस्ट्री, यूएएस, सिरसी, कर्नाटक से 27 विद्यार्थियों ने भ्रमण किया।
3. दिनांक 26 जनवरी,2009 को जिला कृषि अधिकारी, करौली राजस्थान के नेतृत्व में 42 किसानों ने भमण कर आवश्यक जानकारियां प्राप्त कीं।
4. फैज ए आम मार्डन पीजी कालेज मथुरा के 12 विद्यार्थियों ने भ्रमण किया।
5. दिनांक 6-8 फरवरी तक जिला कृषि आधिकारी, भरतपुर, राजस्थान के नेतृत्व में 42 किसानों ने भ्रमण कर आवश्यक जानकारियां प्राप्त कीं।
6. दिनांक 01 मार्च,09 को जिला कृषि आधिकारी, छतरपुर, म.प्र. के नेतृत्व में 30 किसानों ने संस्थान का भ्रमण किया।
7. दिनांक 02 मार्च, 09 को जिला कृषि आधिकारी, छिन्दवाड़ा, म.प्र. के नेतृत्व में 15 किसानों ने संस्थान का भ्रमण किया।
8. दिनांक 05 मार्च, 09 को जिला कृषि आधिकारी, चंडीगढ़ के नेतृत्व में 15 किसानों ने संस्थान का भ्रमण किया।
9. दिनांक 06 मार्च, 09 को जिला कृषि आधिकारी, छिन्दवाड़ा, म.प्र. के नेतृत्व में 15 किसानों ने संस्थान का भ्रमण किया।
10. कृषक कल्याण एवं कृषि विकास भोपाल, म.प्र. के एक किसान समूह ने संस्थान का भ्रमण किया।
11. दिनांक 19 मार्च, 09 को बुन्देलखंड विकास संस्थान से 50 किसानों ने संस्थान का भ्रमण किया।
12. केवीके-जेएनकेवी, टीकमगढ़ से 25 किसानों ने संस्थान का भ्रमण किया।
13. ए एफ पी आर ओ के 100 किसानों ने संस्थान का भ्रमण किया।

पाठकों/किसानों के विचार

मैं एक प्रगतिशील किसान हूं पिछले तीन वर्ष से लगातार आपके संस्थान स्थापना दिवस एवं किसान मेला में अपने साथ अन्य किसान बन्धुओं के साथ मौजूद रहा हूं। हमें आपकी चारा पत्रिका उपलब्ध हो रही है जिसके माध्यम से हरा चारा उत्पादन, संरक्षण एवं उपयोग संबंधी महत्वपूर्ण जानकारियों से हम सब लाभान्वित हो रहे हैं। आशा है यह पत्रिका ग्रामीण एंव शहरी दुग्ध उत्पादकों के लिए मार्गदर्शन का कार्य करती रहेगी।

नागेश्वर सिंह
ग्रा. व पो.-गौरा, वाया- बरौनी डेवढ़ी,
प्रखण्ड-तेघड़ा
जिला-बेगूसराय (बिहार)

आपके संस्थान से प्रकाशित चारा पत्रिका पिछला अंक पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, जो बहुत ही रूचिकर लगा। हिमाचल के जलवायु के अनुरूप कुछ चारा फसलों के प्रदर्शन एवं परीक्षण लगाए गए जिसके माध्यम से हम सब को नई-नई चारा फसलों की प्रजातियों के बारे में नई जानकारी मिली। आशा है हमारी जलवायु को ध्यान में रखकर कुछ घासों के बारे में भी हमें अगले अंक में जानकारी मिल सकेगी।

अक्षय जसरौठिया
ग्राम-जागन, जिला-कामड़ा, हिमांचल प्रदेश

मैं संस्थान की गतिविधियों से विगत कई वर्षों से जुड़ा हुआ हूं तथा अपने साथ-साथ आस पास के लोगों को भी इनसे अवगत कराता रहता हूं। संस्थान द्वारा विकसित नई चारा प्रजातियों तथा उनकी विभिन्न महीनों में उपलब्धता से संबंधित जानकारी हमारी लाभ वृद्धि में सहायक हो रही है। संस्थान का प्रयास सराहनीय है तथा जारी रहना चाहिए।

जटाशंकर
सुराली शोध संस्थान, रविन्द्रपुरी, वाराणसी

आपकी चारा पत्रिका बहुत उपयोगी है। यह पत्रिका बिहार प्रदेश में चारा उत्पादन तकनीकी के विभिन्न प्रजातियों का लाभ अर्जित कर पशुपालन में यहां के किसानों का मार्ग दर्शन करने में सहायक होगी। आशा है आपकी पत्रिका हम सब को नि:शुल्क प्राप्त होगी।

दिवाकर प्रसाद सिंह
ग्रा. व पो. - दादरी जाला संग्रामपुर, जिला-
मुंगेर (बिहार)

आपके संस्थान द्वारा प्रकाशित चारा पत्रिका आपके संस्थान द्वारा लगायी गयी प्रदर्शन (राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, एन.डी.आर.आई, करनाल) से प्राप्त हुई। जिसमें चारा व चारा उत्पादन की वैज्ञानिक विधियों पर प्रकाशित अच्छे एवं लाभकारी जानकारी से अवगत हुआ। कृपया हरियाणा प्रदेश को ध्यान में रखते हुए खरीफ चारा उत्पादन तकनीकी प्रकाशित करने का कष्ट करें।

धरम सिंह
ग्राम-सुभरी, जिला-करनाल (हरियाणा)

आपके संस्थान से प्रकाशित चारा पत्रिका पढ़ने का मौका मिला उसकी विषय सामग्री व भाषा से हमें प्रसन्नता हुई। भविष्य में यदि राजस्थान जैसे कम वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए बारानी व कम सिंचाई वाली चारा प्रजातियों को प्रकाशित करें तो हम किसानों को उससे ज्यादा से ज्यादा लाभ प्राप्त हो सकेगा।

सरबन कुमार यादव
ग्रा. व पो. - जयसिंह पुरा, चैमु, जिला-
जयपुर (राजस्थान)

मैंने आपकी प्रतिष्ठित चारा पत्रिका के माध्यम से चारे की फसलों के बारे में जानकारियां प्राप्त की। इस हेतु आपका धन्यवाद। पूर्वी उत्तर प्रदेश की जलोढ़ मृदाओं में जहां सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है, गिनी घास की कुछ प्रजातियों तथा प्रबंधन तकनीक की जानकारी ज्यादातर किसानों के लिए उपयोगी होगी। साथ में यह भी बताएं कि कितने क्षेत्रफल में उगाई गई घास कितने जानवरों के लिए पर्याप्त होगी? गिनी को क्या किसी अन्य चारे के साथ मिलाकर खिलाना आवश्यक है।

सुरेन्द्र दुबे (प्रधान)
ग्राम- धरौली जमालपुर पो. आसपुर देवसरा
जिला - प्रतापगढ़ (उ.प्र.) पिन - 230124

संस्थान में चारे की विभिन्न फसलों के उत्तम बीज

विक्रय हेतु उपलब्ध हैं।

संपर्क करें-

निदेशक

भारतीय चारागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

झांसी 284003 (उत्तर प्रदेश)

दूरभाषः 0510-2730666 फैक्सः 0510-2730833

संस्थान में पशु वीर्य (सीमेन) की उपलब्धता

संस्थान में वर्तमान में भदावरी भैंस के वीर्य की 2000 डोजेज उपलब्ध हैं। साथ ही भदावरी नस्ल के प्रजनन योग्य सांड़ बिक्रय हेतु उपलब्ध हैं।

संपर्क करें-

निदेशक

भारतीय चारागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

झांसी 284003 (उत्तर प्रदेश)

दूरभाषः 0510-2730666 फैक्सः 0510-2730833